शरारत

शरारत

लेखक

शौकत थानवी

एन० डी० सहगल एण्ड सन्ज़ दिल्ली

दरीबा कलाँ, दिल्ली ।

प्रकाशक :
एन० डी० सहगल एण्ड सन्ज,
दरीबा कलाँ दिल्ली ।

प्रथम संस्करण १९६४

मूल्य : दो रुपये पच्चास नये पैसे

मुद्रक :
हरिहर प्रेस, दिल्ली ।

SHRARAT SHAUKAT THANVI Rs. 2.50

मेरी शादी को छः साल हो चुके थे और अब मैं गोया सौ फ़ीसदी घर वाली बन चुकी थी। यानी अपने घर के निज़ाम की सोलह आने मालिक व मुख्तार और घरेलू सियासियात के स्याह-ओ-सफ़ेद की मालिका। खुशदामन साहबा भी यह कह चुकी थीं कि दुल्हन अब तुम जानो और तुम्हारा काम; मेरी उम्र अब ऐसी नहीं रही है कि मैं दुनियाँ के झगड़े अपने सर लिये रहूँ। मुझको तुम एक रोटी दे दिया करो जो मैं बेफ़िक्री के साथ खा लिया करूं और एक कोने में बैठकर अल्ला-अल्ला करती रहूँ। छोटी नन्द फ़िरोजा भी अपने घर की हो चुकी थी। मुख्तसर यह है कि घर में अब सिर्फ़ मैं थी, मेरी बुढ्ढी खुशदामन साहबा थीं और मेरे साहब थे। इसके अलावा एक मुलाज़िम बाहर, एक मुलाज़िमा और एक लडका घर के अन्दर, यह थी वह छोटी-सी हुकूमत जिसके इख्ति-यारात मुझको सौंपकर खुशदामन साहबा ने गोया पेन्शन ली थी। और मैं इस छोटे-से खानदान की ज़िम्मेदार बनकर मैदाने-अमल में आई थी। सच पूछिये तो मेरी ज़िन्दगी भी कैसी खुशगवार ज़िन्दगी थी! जब तक मैके में रही मां-बाप की आँखों का तारा बनकर रही और सुसराल आकर भी मुझको शफ़क़त (प्रेम) करने वाली सास और मुहब्बत करने वाली नन्द और—दुनिया की सबसे बड़ी नेमत जिसके तसव्वुर ही से मेरे रोंगटे खड़े हो जाते हैं और मैं फ़ख्र के साथ फूली नहीं समाती। यानी दुनिया में मुझको सबसे ज़्यादा अज़ीज़ रखने वाले और मेरे दिल से सबको हटाकर अपने लिए जगह करने वाले साहब मुझको मिले।

शौहर की मुहब्बत दीवानावार मुझको हासिल थी। यानी मैं ऐसे खज़ाने की मालिक थी, जिससे ज़्यादा क़ीमती खज़ाना एक औरत के

लिए दुनिया में कोई और नहीं हो सकता। यक़ीन जानिये कि अगर मैं मुशाहीरे-आलम (संसार की विभूति) में से होती तो दुनिया को सिर्फ़ यही पैग़ाम देती कि मुबारक है वह औरत जिसको शौहर की मुहब्बत हासिल है और ख़ुशनसीब है वह मर्द, जो किसी औरत की तमन्नाओं का मरकज़ है। मैं क्या कहूँ कि मेरे जिस्म में मसर्रत और मुहब्बत, मुहब्बत और मुहब्बत के ग़रूर की कैसी बिजली कौंद जाती थी जब मेरे साहब दफ़्तर से वापस आकर निहायत मुहब्बत से मुझ को रज़िया के बजाये रज्ज़ो कह कर पुकारते थे और जब मैं उनका खैरमक़दम करने के लिए आगे बढ़ती थी तो वह ख़ुद ही फ़ौजी सलाम करके मुझको किस क़दर शर्मिन्दा कर दिया करते थे लेकिन अब मैं यह महसूस कर रही थी कि हमारी ख़ुशगवार ज़िन्दगी में कुछ सर्द आहें भी शरीक होगई हैं और इस शादाब फूल में कुछ कांटे भी निकल आये हैं। इसका मतलब ख़ुदा-न-ख्वास्ता यह नहीं कि मेरे साहब मुझसे मुहब्बत करते-करते घबरा गये थे या मैं उनकी मुहब्बत में कुछ कमी महसूस करती थी। बल्कि जिस बेकैफ़ी का मैं जिक्र कर रही हूँ वह हमारी मुहब्बत से क़तअन (सर्वथा) जुदागाना एक चीज़ थी। बल्कि अगर यह कहा जाये तो ग़लत न होगा कि हमारी मुहब्बत को और भी मुस्तहकम (स्थायी) बनाने वाली एक चीज़ थी। मैं झूठ न बोलूंगी, मेरे साहब ने कभी मुझसे बराहरास्त कुछ न कहा। अलबत्ता होता यह था कि जब कभी मैं ख़ुशदामन साहबा को सलाम करती और वह मुझको दुआएँ देती हुई यह कहतीं कि 'चांद-सा बेटा हो!' उस वक़्त मेरे साहब पहले तो खिलखिला कर हंसा करते थे, मगर अब कुछ रोज से इस दुआ पर कुछ चुप-से हो जाते थे बल्कि मैंने यह कैफ़ियत भी देखी थी कि वह उस दुआ को सुनते ही आसमान की तरफ़ ख़ामोशी से देख-देख कर निहायत मतानत से गर्दन झुका लेते थे। इसके अलावा एक तग़य्युर (परिवर्तन) मैंने यह भी देखा था कि पहले जब मैं ख़ुद इन्हीं हज़रत को सलाम करती थी तो यह शरारत

से मुझको वह दुआएँ देते थे जो खुशदामन साहबा दिया करती थीं। मगर अब कुछ दिनों से बस 'जीती रहो, तुम्हारा कमाऊ जिये!' कहकर हँसते हुए रह जाते थे। मैं इन तग़य्युरात पर ग़ौर करती और बेकसी पर मजबूर होकर रह जाया करती थी। लेकिन एक दिन तो मैंने साहब के दिल में छुपे हुए चोर को ऐसा गिरफ़्तार किया है कि वह भी हैरान ही रह गये होंगे कि यह बीवी हैं या खुफ़िया पुलिस की इन्स्पैक्टर। हुआ यह कि मेरी सहेली शमीम मुझ से मिलने आई हुई थी और उसके साथ उसका बच्चा भी था। प्यारा-प्यारा, गोल-मोल गोरा-चिट्टा। मालूम होता था कि गुलाब का फूल खिला हुआ रखा है। जब साहब शाम को दफ़्तर से आये तो उनके पास उस बच्चे को लिये हुए चली गई। साहब ने बच्चे को देखते ही पूछा :

"यह किसका बच्चा माँग लाईं ?"

मैंने कहा, "शमीम के बुलन्द इक़बाल हैं।"

कहने लगे, "शमीम··· ? वही शमीम जिसकी चार साल पहले शादी हुई है ?"

मैंने कहा, "हाँ वही शमीम।"

कहने लगे, "शादी होते देर नहीं और रसीद भी आगई। माशा-अल्ला बड़ा प्यारा बच्चा है, लाओ तो इसे इधर।"

मेरी गोद से बच्चे को लेकर चूमा-चाटा किये और मैंने देखा कि उनके चेहरे का रंग मुतग़य्यर (परिवर्तित) हो गया। मुँह फेरकर शायद ठण्डी साँस भरी और फ़ौरन निहायत ख़ामोशी के साथ बच्चे को मेरी गोद में देकर खिड़की से बाहर झाँकने लगे। उनकी यह हालत देखकर मेरे कलेजे पर जैसे घूंसा-सा लगा, मगर मैंने बात टालने के लिए उनसे कहा :

"क्या इसलिए आप इधर-उधर झाँक रहे हैं कि उसको कुछ देना न पड़े ?"

हँसकर बोले, "नहीं, बल्कि इसलिए इधर-उधर झाँक रहा हूँ

कि अगर मैंने उसको कुछ दिया तो खुद क्योंकर किसी से वसूल करूँगा। मेरे पास तो इस क़िस्म का कोई ज़रिया ही नहीं है।"

मैंने उनसे और साफ़ कहलवाने के लिए बनकर कहा, "यानी ? मैं नहीं समझी ?"

कुछ रुककर फिर हँसकर बोले, बात यह है कि तुम न खुद मां बनती हो और न मुझको किसी का बाप बनने देती हो। समझीं या फिर समझाऊँ ?"

मैंने चाहा था कि उनसे साफ़-साफ़ कहलवाऊँ, मगर उनके साफ़-साफ़ कहने पर वाक़ई मैं कुछ झेंप-सी गई और लड़के को लेकर गर्दन झुकाये हुए कमरे से भाग गई। बहरहाल आज मुझको यह मालूम हो गया कि मेरे सरताज साहबे-औलाद होने के लिए किस क़दर बेचैन हैं। और इस एहसास के बाद मुझको अपनी बेचारगी पर सही मानों में अफ़सोस हुआ। मैं सोचा करती थी कि अगर अपने प्यारे शौहर को आराम पहुंचाने और खुश करने के लिए मैं अपनी ज़िन्दगी तक कुर्बान कर सकूंगी, तो करूँगी मगर क़िस्मत तो देखिये कि मेरे शौहर को जो ख्वाहिश पैदा हुई थी, उसका इलाज मेरे इख्तियार ही में न था बल्कि मैं खुद उस सिलसिले में एक मजबूर की तरह बेदस्त-ओ-पा (अपंगु) थी। काश ! बजाय इस ख्वाहिश के मेरे साहब को मेरी ज़िन्दगी दरकार होती ! काश ! बजाय इस आरज़ू के उनकी कोई ऐसी आरज़ू होती जिसकी तकमील (पूर्ति) मेरी क़ुर्बानी से हो सकती ! मगर उनकी इस तमन्ना का तो मेरे पास कोई इलाज ही न था।

मैं शमीम से रुख्सत होने के बाद शाम तक इसी फ़िक्र में महव रही और वह मंज़र मेरी निगाहों के सामने रक्सां रहा जब साहब ने खामोशी के साथ बच्चे को मेरी गोद में देकर खिड़की में झांकना शुरू कर दिया था। मेरा दिल जैसे कोई मसले देता था और मैं बेक़रार थी कि किस तरह अपने अज़ीज़ शौहर की इस दिली तकलीफ़ को दूर करूँ। मैं इसी उधेड़-बुन में थी कि साहब ने अपनी तरन्नुमरेज़ (सुरीली)

आवाज़ में रज़्ज़ो कहकर मेरे शाने पर हाथ रख दिया और मैं फ़ौरन करवट लेकर उठ बैठी तो साहब ने कहा :

"शमीम गईं ?"

मैंने कहा, "जी हाँ, वह तो दोपहर ही को चली गई थीं।"

कहने लगे, "वाह, तुमने क्यों जाने दिया ? उनको लेकर सिनेमा चली जातीं, मैंने इन्तिज़ाम कर दिया था।"

मैंने कहा, "पहले तो कहा नहीं, अब कह रहे हैं आप।"

कहने लगे, "अच्छा तुम तो चलोगी ?"

मैंने बग़ैर सोचे-समझे कह दिया, "मेरा तो दिल नहीं चाहता।"

कुछ परेशान-सा चेहरा बनाकर बोले, "क्यों, क्यों दिल नहीं चाहता ? (सर पर हाथ रखकर) तबियत तो अच्छी है ?"

मैंने हँसकर कहा, "जी हाँ तबियत अच्छी है, यों हीं दिल नहीं चाहता।"

मगर वह सर हो गये कि आख़िर बात क्या है ? और बार-बार यही पूछने के बाद बोले, "इस वक़्त तुम कुछ परेशान-सी भी हो, यह मामला क्या है ?"

मैंने फिर हँसकर तेज़ी से कहा, "वाह ! भला कोई बात भी हो। ख्वाहमख्वाह मैं परेशान क्यों दिखाई देने लगी ?"

तब उन्होंने हाथ पकड़ कर उठाते कहा, "अच्छा तो चलो फिर !"

अब मैंने ज़्यादा इन्कार करना मुनासिब न समझा, उठकर फ़ौरन कपड़े पहने और उनके साथ होली। सिनेमा पहुँचकर साहब ने मुझे अपने पास ही बिठाया और हमेशा वह यही करते थे कि जब अपने साथ मुझको सिनेमा ले जाया करते थे तो अपने साथ ही बिठाते थे ताकि फ़िल्म के बारे में मुझको समझाते भी जायें। मगर आज जैसे ही सिनेमाहाल में अँधेरा हुआ और रोशन हरूफ़ पर्दे पर थरथराये, साहब ने ख़ुद ही हँसकर कहा :

"क्या ख़ूब ! राजा क्या था गोया हम ही थे।"

मैंने पूछा, "क्या है ?"

कहने लगे, "इस क़िस्से को इस तरह शुरू किया गया है कि एक राजा के कोई औलाद न थी।"

मैं सच कहती हूँ कि सिनेमा आने से मेरी तबियत ज़रूर बहल गई थी लेकिन वह मंज़र अब तक मेरी नज़रों के सामने था कि शमीम के बच्चे को साहब ने ललचाई हुई नज़रों से देखकर मायूसी के साथ खिड़की से झांकना शुरू कर दिया था। इस पर तुर्रा यह हुआ कि फ़िल्म भी गोया मेरे लिए एक अज़ाब साबित हुआ। आई थी तफ़रीह करने, दिल बहलाने और ग़म ग़लत करने मगर नतीजा यह हुआ कि जब उस फ़िल्म का आखिरी मंज़र दिखाकर हाल में रोशनी की गई तो साहब ने मुझको उसी हसरत भरी नज़रों से देखा कि वह नज़रें मेरे दिल में नश्तर बनकर पैवस्त हो गईं और मैं सच कहती हूँ कि अगर मजमे का खयाल न होता तो शायद मैं चीखें मार-मार कर रोने लगती। साहब ने मुझको निहायत कमज़ोर आवाज़ में कहा, "चलिये अब।"

मैं बग़ैर जवाब दिये हुए उनके साथ सिनेमा-हाल से वापस आई। सिनेमा से घर तक खुदा जाने रास्ते में क्या-क्या देखा होगा और क्या-क्या सुना होगा, मगर मेरी समाअ़त और बसारत दोनों पर मेरा ख़याल कुछ ऐसा ग़ालिब था कि न मैंने कुछ देखा और न मैंने कुछ सुना, बल्कि अपने ही खयाल में डूबी हुई घर पहुँच गई। मेरे साहब ने ग़ालिबन सिर्फ़ इसलिए कि मैं उनके महसूसात का अन्दाज़ा न कर सकूँ, अपनी मसनूई खन्दा पेशानी के साथ कहा, "आपको ग़ालिबन यह मालूम होगा कि भूखे का पेट भरना सवाब है।"

मैं भी अपने रोते हुए दिल के साथ मुस्कराती हुई उठी और मेज़ पर खाना लगवा कर साहब के साथ खुद भी इस खयाल से बैठ गई कि अगर इस वक़्त मैंने खाना न खाया तो साहब भी भूखे रहेंगे। साहब ने इस तरह कि गोया उन पर असर ही नहीं है, हँसते हुए कहा :

"आप तो वल्लाह तकल्लुफ़ कर रही हैं। हालाँकि मैंने पचासों

मर्तबा अर्ज़ किया है कि इस घर को बिल्कुल अपना ही घर समझिये, लीजिये यह मुर्ग़ की लात खाइये।"

मुझको 'मुर्ग़ की लात' पर हँसी आ गई और साहब ने मुर्ग़ की लात के मुताल्लिक़ दो-तीन लतीफ़े सुना डाले। खाने से फ़ारिग़ होकर मैं पानदान लेकर बैठ गई और साहब ने सिगार सुलगाकर अख़बार पढ़ना शुरू किया। वह तो अख़बार के ज़रिये इस वक़्त दुनिया की सैर कर रहे हैं और मैं उन्हीं ख़यालात में मुस्तग़रक़ (तल्लीन) थी, जो मेरे लिये तमाम दिन रूही तकलीफ़ का बाइस (कारण) बने रहे।

"हाँ आपने बताया नहीं कि आपसे और शमीम से आज क्या-क्या बातें हुई।?"

मैंने अपने ख़याल से चौंककर अपने को सँभालते हुए कहा, "बातें क्या होतीं, यही इधर-उधर की।"

मुस्कराते हुए बोले, "आज मेरे ख़याल में वह आप से कुछ लड़ कर गई हैं इसलिए आप कुछ चुप-चुप हैं। आखिर क्या बात है?"

मैंने भी मुस्कराकर जवाब दिया, "लड़कर जाने की एक ही रही। वह तो ग़रीब बहुत सीधी है।"

कहने लगे, "अच्छा तो अब बताइये कि आपकी ख़मोशी की क्या वजह है?"

मैंने कहा, "यानी ख्वाहमख्वाह।"

कहने लगे, "नहीं बताइयेगा?"

मैंने कहा, "कोई बात भी हो।"

उन्होंने आगे बढ़ते हुए कहा, "नहीं बताइयेगा? फिर लगाऊँ गुदगुदी?"

गुदगुदी के नाम से मेरी रूह निकलती है। मैंने हाथ बढ़ाकर जल्दी से कहा:

"ख़ुदा के लिए उधर ही रहिये, मैं बता दूँगी।'

पीछे हटकर बोले, "अच्छा तो बताइये।"

मैंने कहा, "क्या बताऊँ ?"

आगे बढ़ते और गुदगुदी का इशारा करते हुए बोले, "फिर वही।"

मैंने जल्दी से कहा, "नहीं, नहीं।"

मेरे बिल्कुल क़रीब आकर बोले, "तो बताइये। जल्दी एक, दो।"

मैंने तीन कहने से पहले ही कहा, "सुनिये, हाँ बैठकर सुनिये।"

वह जाकर मसहरी पर बैठ गये और मैंने कहा, "सचमुच कोई बात नहीं है।"

उन्होंने संजीदा होकर कहा, "नहीं वाक़ई मालूम तो हो, क्या बात हुई ?"

मैंने खासदान उनके आगे बढ़ाते हुए और अपनी मसहरी पर लेटे हुए कहा, "कुछ नहीं यों ही दिल परेशान-सा रहा।"

अब वह और भी सर होगये और अपनी मसहरी से मेरी मसहरी के क़रीब कुर्सी पर बैठते हुए बोले, "दिल परेशान रहा ? बिला वजह दिल परेशान नहीं रह सकता। और यह भी नई बात है कि आप मुझसे परेशानी की वजह छुपा रही हैं। आजतक तो आपने कोई ऐसी बात राज़ में रखी नहीं, मगर आज आप बहुत राजदारी बरत रही हैं।"

मैंने उनकी तरफ़ उनको अपना समझते हुए तास्सुरात (अनुभूति) में डूबी हुई आवाज़ से कहा, "अच्छा एक बात मानियेगा ?"

मेरा हाथ अपने हाथों में लेकर बोले, "हाँ मानूंगा। बताओ मैं वादा करता हूँ कि मान लूँगा।"

मैंने संजीदगी से मगर बग़ैर किसी रंजीदगी के कहा, "आप एक और शादी कर लीजिये।"

शादी का नाम सुनकर पहले वह मुंह खोलकर खामोश रह गये, फिर अपने मख़सूस मज़ाहिया (विनोदी) अंदाज़ में हंसकर बोले, "शादी करलूं ? सुब्हान अल्लाह ! क्या खूब मज़ाक़ फ़र्माया है जनाब ने !"

मैंने फिर संजीदगी से उनके बाल अपने हाथ से दुरुस्त करते हुए कहा, "मैं वाक़ई कह रही हूँ और यह मेरी ख्वाहिश है कि अगर आपको मुझसे कुछ भी क़ल्बी ताल्लुक़ है तो आप मेरी इस ख्वाहिश

को रद्द न करें··· ।"

बात काटकर निहायत प्यार से मेरा हाथ झटकते हुए बोले, "पगली कहीं की ! आखिर यह बैठे-बिठाये सूझी क्या ?"

मैंने कहा, "देखिये आपने मेरी कोई ख्वाहिश कभी रद्द नहीं की है, क्या मेरी इस ख्वाहिश को रद्द कर दीजियेगा ?"

ज़रा दूर हटते हुए बोले, "मालूम होता है तुमने मेरा टेनिस-लॉन बरबाद कर दिया और वहाँ की सब घास चर गई हो ।"

मैंने उनका हाथ पकड़कर कहा, "आप इस बात को मज़ाक में टाल रहे हैं और मैं किस तरह यक़ीन दिलाऊँ कि मैं सचमुच इसके लिये बेक़रार हूँ कि आप एक शादी और करलें ।"

कहने लगे, "आखिर क्यों कर लूँ ? न मुझको कुत्ते ने काटा है न आपने ।"

मैंने खुशामदाना अन्दाज़ में कहा, "मेरा कहना मानिये और शादी कर लीजिये । खुदा की क़सम ऐसी प्यारी-प्यारी दुल्हन लाऊँगी कि आप भी बस खुश ही हो जायें ।"

सलाम करते हुए बोले, "बस तवज्जो का शुक्रिया । मगर मुझको बख्श ही दीजिए । एक प्यारी दुल्हन के मारे तो नाक में दम है कि घण्टे भर से खुशामद कर रहा हूँ और खामोशी की वजह नहीं बताई जाती या बताई जाती है तो इस तरह बेवक़ूफ़ बनाया जाता है कि शादी करलो । गोया मैं बिल्कुल फ़ालतू हूँ अपने घर का ।"

मैंने कहा, "खुदा की क़सम मैं आपसे सच कहती हूँ मुझको आप की शादी का अरमान है और मैं उसी वक़्त खुश हो सकती हूँ जब आप शादी कर लें ।"

कहने लगे, "वल्लाह अरमान की भी एक ही रही । किसी को होता है औलाद का अरमान, आपको पैदा हुआ है सौत का अरमान । हैं वल्लाह आप भी अजाइबखाने के क़ाबिल ।"

मैंने उनका हाथ पकड़-पकड़ कर कहा, "जी हाँ, मैं आपकी शादी

के लिए इसी वजह से तो बेताब हूँ कि••• ।"

मेरे हाथ में चुटकी लेकर बोले, "हाँ कहो, कहो। आप मेरी शादी के लिए इस वजह से बेताब हैं ताकि आप जल-जलकर मरें।"

मैंने कहा, "जलने की इसमें कौन-सी बात है ? देखिये अज़्दवाजी ताल्लुक़ात (घरेलू सम्बन्ध) का मक़्सद अव्वल यह है कि नस्ल में तरक़्क़ी हो। अगर इस मक़्सद के लिये मैं बेकार साबित हुई हूँ तो मेरा फ़र्ज़ यह है कि मैं आपको अक़्दे-सानी (दूसरे निकाह) की तरफ़ मुतवज्जे करूँ ताकि आपके खानदान का सिलसिला महज़ मेरी वजह से मुनक़ता (अवरुद्ध) न हो, वल्कि आपके बाप-दादा का नाम चले और आप साहबे-औलाद बनें।"

मुँह चिढ़ाकर बोले, "अच्छा, अच्छा अब अपनी क़ाब्लियत को रहने दीजिये। मालूम हुआ कि आप बड़ी बुक़रात की चची हैं लेकिन आप के रिश्ते से मैं भी उसका चचा हुआ। मुझको न औलाद की ज़रूरत है और न दूसरी शादी की। मेरी शादी हो चुकी है और अगर क़िस्मत में औलाद है तो एक ही बीबी से हो सकती है, वर्ना मुझको न क़िस्मत से शिकायत है और न बग़ैर औलाद के मैं यतीम हुआ जाता हूँ।"

मैंने कहा, "देखिये, मुझको यह खूब मालूम है कि आप मेरी मुहब्बत के जोश में औलाद जैसी नेमत से भी हाथ धो रहे हैं। मगर आपको अपनी मुहब्बत की क़सम आप दूसरी शादी कर लीजिये। मैं उन औरतों में नहीं हूँ जो सौत के नाम से लरज़ जाती हैं और जिन्होंने सौतिया डाह को ज़रबुल मस्ल (कहावत) बना दिया है। बल्कि मेरा मक़सद तो यह है कि मैं आप का बच्चा खिलाऊँ और आपके वारिस की खिदमत करूँ।"

कहने लगे, "मेरे वारिस की खिदमत तो मेरे बाद कीजियेगा, मगर अभी तो मेरी ही खिदमत से आपको फ़ुर्सत नहीं।"

मैंने उनके मुँह पर हाथ रखते हुए कहा, "खुदा न करे, ऐसी बात न कहा कीजिये। मैं आपकी ज़बरदस्ती दूसरी शादी कराऊँगी और अगर आपको

मेरा कुछ भी खयाल है तो आपको करनी होगी दूसरी शादी।"

आँखें निकाल कर बोले, "क्या वाक़ई कुछ सर फिर गया है या आज कुछ पी ली है। अजी बेगम साहबा, हँसी-ठट्ठा नहीं है सौत के साथ बसर करना। और मेरी चँदिया में भी इतने बाल नहीं है कि दो जोरुओं का इकलौता शौहर बनकर रहूँ। दूसरे मुझको ऐसी प्यारी-प्यारी बूटासी बीवी के होते हुए शादी करने की आखिर ऐसी ज़रूरत ही क्या है? ज़्यादा-से-ज़्यादा यही ना कि औलाद न होगी। अजी हम बिल्ली का बच्चा पाल लेंगे, कुत्ते का पिल्ला ले आयेंगे आपका अरमान निकालने को, या किसी को आप गोद ले लीजिये और खूब दिल के अरमान निकालिये।"

मैंने कहा, "तो आखिर मुझको इतनी तबालत की ज़रूरत ही क्या है। अगर खुद मेरे यहाँ बच्चा न हो सके तो मैं किसी के आगे हाथ फैलाऊँ।"

कहने लगे, "अगर आपके यहाँ हो सकता है तो फिर मरी क्यों जाती हैं आरज़ू के मारे?"

मैंने कहा, "हाँ, मगर इसी तरह की आप दूसरी शादी कर लें।"

कहने लगे, "लेकिन अगर मेरी दूसरी बीवी से बच्चा हुआ तो वह आपका कैसे हो सकता है?"

मैंने कहा, "हो कैसे नहीं सकता? क्या वह अपने घर से लायेगी? होगा तो मेरे ही शौहर का यानी मेरा। हाँ यह बात है कि उसकी माएँ दो होंगी—वह भी और मैं भी। बल्कि मैं ही उसको अपने पास रखूंगी और मुझ ही को अपनी माँ समझेगा।"

हँसकर बोले, "रज्ज़ो, तुम सख्त क़िस्म की बेवक़ूफ़ लौंडिया हो। सौतेली औलाद के लिए इस क़िस्म की तवक़्क़ो (आशा)? आस्तीन के साँप से वफ़ा की उम्मीद? मालूम भी है कि सौतेली औलाद आपको घन-चक्कर बना देगी।"

मैंने कहा, "आपकी बला से। आपको मालूम नहीं है कि ताली दोनों हाथ से बजती है। अगर मैंने अपना बर्ताव अच्छा रखा तो सब

ठीक रहेंगे।"

कुछ उलझ कर या लाजवाब होकर बोले, "अच्छा खैर यह बकवास करो खत्म और आदमियों की तरह यह बताओ कि कल है मेरी तातील, कहीं चलोगी या नहीं ?"

मैंने कहा, "लगे टालने बात को……?"

ज़रा संजीदगी से बोले, "रज़्ज़ो, मुझको इस फ़िक्र से तकलीफ होती है। क्या तुम मुझको तकलीफ देना चाहती हो ?"

मैं वाक़ई उनको तकलीफ़ देना नहीं चाहती थी, लिहाज़ा मैं भी उस वक्त चुप हो रही और कल के मुताल्लिक़ जो दिलचस्प प्रोग्राम खुद उन्होंने बनाया, उसको मंजूर करके गुफ़्तगू का रुख बदल दिया। थोड़ी देर तक साहब इधर-उधर की दिलचस्प गुफ़्तगू करते रहे और उसके बाद सो गये और मैं भी एक अजीब शशो-पंज के आलम में अपने खयालात की गुत्थियाँ सुलझाती हुई सो गई।

२

मेरे साहब को अक़्दे-सानी के नाम से तकलीफ़ होती थी, शदीद तकलीफ़। मालूम यह होता था कि मैं अपने ऊपर सौत नहीं ला रही हूँ बल्कि उनके ऊपर ला रही हूँ। बहरहाल जब मैंने यह देख लिया कि वह सचमुच इस जिक्र से कुछ चिढ़-से जाते हैं मैंने उनसे यह ज़िक्र करना छोड़ दिया लेकिन यह वाक़या है कि मैं खुद शबो-रोज इसी उधेड़-बुन में थी कि अपने सरताज की दिल्ली तमन्ना को किस तरह कामयाब देखूं। ज़माना गुज़रता जाता था और सूरतेहाल (स्थिति) वही थी जो अब तक रही। और आइन्दा भी यही उम्मीद थी कि अगर साहब ने अक़दे-सानी न किया तो उनका साहबे-औलाद होना

मुमकिन नहीं। मगर आप ही बताइये मैं कैसी मजबूर थी कि एक तरफ़ को ख़ुदा की मस्लिहत में दखल देना मेरे इमकान में न था और दूसरे साहब को अक़्दे-सानी पर राजी करना भी दुश्वार नज़र आता था। मुख़्तसर यह कि मैं अजीब बेकसी के आलम में थी और कुछ समझ में न आता था कि करूँ तो क्या करूँ ? इस ज़माने में कुछ ऐसी परेशान सी रहती थी कि घर जैसे काटे खाता था। किसी काम में दिल ही न लगता था, ख़ुद साहब को भी परेशानी का एहसास था और वह यह भी जानते थे कि मैं क्यों परेशान रहती हूँ। लेकिन यह अजीब बात थी कि वह बजाय मेरी परेशानी की वजह का इलाज करने के यों ही मेरा दिल बहलाने की कोशिशें करते रहते थे कि कभी तो मुझ को लेकर बाग़ में चले गये और वहाँ थोड़ी देर उछल-कूद रही और वक़्ती तौर पर मेरे ज़हन से यह तकलीफ़देह खयाल निकल गया। कभी मुझको सिनेमा दिखला लाये, कभी यों ही टहलने के लिए आबादी से दूर गाड़ीपर निकल गये और वहाँगाड़ी छोड़करमुझसे कहा कि चलो सड़क पर मर्दों की तरह बेपर्दा। लेकिन इन बातों से कहीं मेरी परे-शानी रफ़ा हो सकती थी ? आखिर आपने यह तरकीब निकाली कि मुझको ज़बरदस्ती इधर-उधर मेरी सहेलियों और अज़ीज़ों के यहाँ मेहमानी में भेजने लगे। मगर मैं सच कहती हूँ कि इन तमाम बातों से भी मेरी दिलबस्तगी न होती थी। फ़र्ज़ कर लीजिये कि दिनभरकिसी के यहाँ मेहमान रही और वहाँ मुझको मेरे तकलीफ़देह खयाल ने न भी सताया तो भी यह होता था कि जब मैं शाम को आकर घर पर फिर उसी माहौल को देखती थी तोफिरमेरे खयालात मुझको परेशान कर देते थे। मुख़्तसर यह कि वक़्ती तफ़रीहों और आरज़ी मसरू-फ़ियतों से मेरे मुस्तक़िल खयालात पर ग़ालिब आने की कोशिशें की जा रही थीं, वह सब फ़िज़ूल थीं और उनसे मेरे महसूसात को कोई तिस्कीन न होती थी।

एक रोज़ का ज़िक्र है कि मैं साहब के मजबूर करने से अपनी

एक हमजमाअत सहेली निगार के यहाँ मेहमान चली गई। मुझको देखकर निगार की मसर्रत का जो आलम था वह बयान नहीं कर सकती थी। अल्लाह, अल्लाह पूरे चार साल के बाद मैं निगार से मिली थी—यानी शादी के बाद सिर्फ़ एक मर्तबा निगार से मिल सकी थी। वह भी इस तरह कि उसने मुझे बुलाया था लेकिन बावजूद वादा करने के मैं उसके यहाँ अब तक न जा सकी थी। चुनाचे आज मुझ को देखते ही दौड़कर लिपट गई और मारे मुहब्बत के झिंझोड़ कर रख दिया। मुझको मालूम होता था कि जैसे पागल हो गई है। बात यह थी कि स्कूल के ज़माने में मेरे और निगार के ताल्लुक़ात ऐसे थे कि बस एक-जान-दो-क़ालिब, बल्कि स्कूल में एक चौकड़ी मशहूर थी—यानी मैं निगार, शकुन्तला और तारा। हम चारों अपने दर्जे में एक ही सफ़ में बैठते थे और हर वक़्त साथ-ही-साथ रहते थे। शकुन्तला बेचारी खाने-पीने में शिरकत से तो मजबूर थी लेकिन वैसे हम चारों का यह हाल था कि गोया शीरो-शकर थे। स्कूल छोड़ने के बाद अलबत्ता हम चारों तितर-बितर हो गये, वर्ना स्कूल के ज़माने में तो इस इन्तिशार (पृथकता) का ख़याल ही हम चारों के लिए तकलीफ़देह होता था। मगर अब तो यह है कि मेरी शादी हो चुकी, निगार अपने घर की है, शकुन्तला की हम सबसे पहले हो चुकी थी, रह गई तारा अलबत्ता वह अब तक आज़ाद थीं। बहरहाल निगार से मिलकर स्कूल की भूली-बिसरी जिन्दगी आँखों के सामने फिर गई। यही बीबी निगार जो आज माशा-अल्लाह दो बच्चे वाली हैं और फूलकर कुप्पी-सी हो गई हैं, स्कूल के ज़माने में एक सूखी-सी लौंडिया नज़र आती थीं। होता यह था कि स्कूल के अहाते में एक बेरी थी और एक कैथे का दरख़्त। हम लोग घर ही से नमक-मिर्च पिसवाकर स्कूल ले जाते थे और वहाँ कैथे तोड़-तोड़ कर खाते। कुत्ते की-सी खाँसी हो रही है, रातों की नींद खाँसी की वजह से हराम है। हकीम साहब ने बताया है कि खटास तो जहर ही है, मगर मीठी चीज़ें भी न खाई जायें; और हो यह रहा है कि स्कूल

में कैथे और वेर उड़ रहे हैं। हम लोग करते यह थे कि एक-एक पानी या पेशाव के वहाने से दर्जे से निकल आये और पहुँचे कैथे के नीचे, वहाँ वुआ निगार को हम लोग पकड़ कर दीवार पर चढ़ा देते थे। तारा पहरे पर रहती थी कि कोई आता हो तो फ़ौरन इत्तला दे, और मैं कैथों पर ढेलों से निशाने लगाती थी; शकुन्तला वांस से कैथे तोड़ती थी। एक दिन जो मैंने एक कैथे पर तककर ढेला रसीद किया तो वह दरख्त की शाख़ से टकराता हुआ ठीक निगार की पेशानी पर लगा और वह वेचारी सर पकड़ कर दीवार पर वैठ गई और लगा ख़ून वहने। उधर मेरा यह हाल था कि काटो तो वदन में लहू की वूंद नहीं। फौरन निगार को हम लोगों ने दीवार से उतारा और शकुन्तला ने अपनी साड़ी से एक धज्जी फाड़ कर मरहम पट्टी की। और कोई लड़की होती तो उस वक़्त आफ़त ही आ गई थी, मगर निगार ने पट्टी वँधवाते ही मेरे गले में वांहें डालकर कहा, "तुम क्यों चुप हो, तुम्हारा क्यों वुरा हाल हो रहा है? चोट तो मेरे लगी है तुम्हारी ग़लती थोड़ी है।" इस वक़्त मुझको वह तमाम वातें याद आ रही थीं और निगार इधर-उधर फुदकती फिर रही थी कभी वर्फ़ तोड़कर फलों में डालने में मसरूफ है तो कभी आइसक्रीम की मशीन साफ़ करा रही है। मैंने उसकी साड़ी का आँचल पकड़ कर कहा, "अरी वह भी है कैथा?"

उसने चलते-चलते हंसी से वल खाते हुए कहा, "हाँ-हाँ, याद है और ढेला भी याद है।"

मैंने कहा, "खांसी की क्या दवाएँ हम लोग करते थे?"

उसने आइसक्रीम का सामान वाहर भेजकर कहा, "और वह जो पिटाई हुई थी?"

मैं उस वाक़्ये को कुछ भूल-सी रही थी, लिहाज़ा मैंने कहा, "कव?"

उसने मेरे ज़ानू पर दुहत्तर मारते हुए कहा, "नेकी उतरे तुझ पर, भूल गई वह चोट की मार। जव तूने मेरे धोखे में मिस कैसल को धक्का दिया था और वह गिरी थीं··· ?"

मुझको वाक़्या याद आ गया, लिहाज़ा मैंने बात काट कर कहा, "हाँ-हाँ याद है, और यह भी याद है कि मेरे पिटने पर तू हँसी थी, चुड़ैल कहीं की।"

हुआ यह था कि हमारे दर्जे में एक मिस कैसल जुग़राफ़िया और सिलाई के क्लास लेती थीं। वैसे तो वह निहायत स्याह फ़ाम थीं यानी हम लोग उनको 'काला कौवा भुजंगा हफ़्ते का रोज़' कहते थे, मगर उनका डील-डौल बिल्कुल निगार से मिलता-जुलता था। चुनांचे एक दिन जो मैं दर्जे से निकली तो मिस कैसल जा रही थीं, उनकी पीठ मेरी तरफ़ थी। मैं बिल्कुल यह समझी कि निगार है, लिहाज़ा मैंने चुपके-चुपके जाकर उनको ऐसा ज़ोर का धक्का दिया है कि वह पंखा खेंचने वाली के ऊपर क़लाबाज़ी खा गईं। अब मैं देखती हूँ तो मिस कैसल, मेरा दम ही तो निकल गया। मैं लगी ख़ुद-ब-ख़ुद रोने और ऊपर से उन्होंने मारे तमाचों के मेरा बुरा हाल कर दिया। फिर बड़ी मिस साहिबा से भी शिकायत की और उन्होंने ख़ूब डाँटा। उसी वाक़्ये को आज निगार ने याद दिलाया था। वह कम्बख़्त मेरे पिटने पर या मिस कैसल के इस बुरी तरह लुढ़कने पर मारे हँसी के मरी जाती थी। चुनांचे आज भी इसका उस वाक़्ये को याद करके मारे हँसी के बुरा हाल था। मैंने संजीदगी के साथ कहा :

"आज शकुन्तला और तारा भी होतीं तो कैसा अच्छा था!"

निगार ने अपनी हँसी ख़त्म करते हुए कहा, "शकुन्तला तो पूना में है मगर तारा यहीं है। अभी चार-पाँच रोज़ हुए मैं गई थी, वह तुमको बहुत याद करती है। मगर अभी तक बिल्कुल वैसी ही कैंगिली लौंडिया है। आजकल तो उनकी शादी का ज़ोर है, बहुत-सी निस्बतें आई हुई हैं। मैं जो गई तो उस चुड़ैल ने चुपके से मुझको वह तमाम ख़ुतूत दिखाये, जो उसकी निस्बत के लिए आये हुए हैं।"

कहने लगी, "तेरी क़सम उसने सब ख़ुतूत दिखाये और लड़कों की तसवीरें भी।"

मैंने कहा, "[illegible] है, इसके [illegible] में कोई ख़याल चाहता है ।"

निगार ने कहा, "[illegible] मोटर तो है ही थोड़ी देर में चले चलेंगे ।"

मैंने [illegible] होते हुए कहा, "[illegible] दिल तो चाहता था जाने को ।"

निगार ने कहा, '[illegible] रही है ? अभी बजा ही क्या है ? एक बजा होगा । चलो दो बजे चलें और चार बजे तक वापस आ जायेंगे ।"

मैं राज़ी हो गई तो निगार ने मोटर के लिए कहलवा दिया । वह ख़ुद भी तैयार हो गई । चुनांचे हम दोनों आइसक्रीम वग़ैरा खा कर मोटर पर सितारा बनी उर्फ़ तारा के यहाँ पहुँच गये । तारा ने जो हम दोनों को ग़ैर मुतवक़्क़ो तौर पर बिना आशा के देखा तो मारे ख़ुशीके उसका अजीब हाल हुआ । मुझसे तो इस तरह लिपटी कि किसी तरह छोड़ने का नाम ही न लेती थी । और बेवक़ूफ़ी देखिये कि वफ़ूरे-मसर्रत (भावोन्मेष) में लगी रोने । वह कहिये कि निगार ने उसको ठोक-पीटकर दुरुस्त किया । मगर वाक़ई हम लोगोंकी मुहब्बत स्कूल के ज़माने तक महदूद न थी, बल्कि आज भी इस मुहब्बत में वही जोश बाक़ी था । तारा हम दोनों को लेकर अपने कमरे में पहुँची और वही स्कूल की बातें शुरू हो गईं । उसने भी मिस कैरल के गिरने का क़िस्सा हँस-हँसकर और हँसी के मारे क़लाबाजियां खा-खाकर बयान किया । आख़िर मैंने कहा :

"क्यों री तू अपनी निस्बत के ख़त सबको दिखाती फिरती है ?"

कहने लगी, 'तो क्या हुआ ? तुम लोगों को भी न दिखाऊँ ? मैंने यों ही इस निगार की बच्ची को दिखाये थे, इसीने तुमसे जड़ दिया होगा ।"

मैंने कहा, "तो मतलब तेरा यह है कि मुझको न दिखायेगी ।"

मुझको बोली, "तुम भी देख लेना। ज़रा अम्मीजान कमरे से "हाँ-हाँ, मैं उड़ा लाऊँ।" यह कहते ही उसके ज़ेहन में खुदा जाने क्या बात आई कि दौड़कर अम्मीजान के पास पहुंची और उनसे कुछ कह कर फिर आगई।

मैंने पूछा, "क्या कह आई उनसे?"

कहने लगी, "मैंने उनको चाय बनाने के लिए टाला है यहाँ से। वह जायें तो मैं लाऊँ खत।"

इतने ही में तारा की वाल्दा कमरे से उठकर बावर्चीखाने की तरफ़ गईं और यह बला लपक कर अल्मारी में से एक बण्डल उठा लाई। कहने लगी:

"लो एक-एक करके देखो खत। मगर खत क्या करोगी देखकर, तसवीरें देखो।"

यह कहकर खुद उसने एक तसवीर निकाली और मेरे हाथ में देते हुए कहा:

"यह बेचारे महात्मा गांधी के छोटे भाई हैं और दस बरस से बरत रखे हुए हैं। देखो तो मुए की हड्डियाँ-पसलियां कोट के अन्दर से दिखाई दे रहीं हैं और मरा जाता है शादी के लिए। मालूम होता है कि अगर शादी न हुई तो जान दे देगा।'

निगार ने कहा, "बहन, मर्द की सूरत नहीं देखी जाती, सीरत देखी जाती है। ऐसा मुहब्बत में बदहवास मियाँ मिलेगा नहीं।"

तारा ने कहा, "खैर आप रहने दीजिये इस ढांचे की सिफ़ारिश करने को। यह देखो दूसरी तसवीर।"

यह कहकर उसने एक दूसरी तसवीर दी और कहने लगी, "यह साहब लड़के के वालिद नहीं बल्कि खुद लड़का है। दाढ़ी पैदाइशी है उससे बेचारे मजबूर थे। नखास (स्थान-विशेष) में कबूतर बेचते हैं। आप फ़र्माते हैं कि मैं लड़की के नाम अपनी जायदाद लिखने को तैयार हूँ जो एक लाख के क़रीब होती है। अबूजान ने जवाब दिया है कि

मैं लड़की की शादी करना चाहता हूँ, लड़की बेचने का कोई ख़याल मेरे ज़हन में नहीं है।"

मैंने उस तसवीर को वापस देते हुए कहा, "और ?"

तारा ने झाँककर अपनी मां को देखते हुए, जो बावर्चीख़ाने में थीं, कहा, "यह लो तीसरी तसवीर—आप डनलप मोटर टायर का इश्तेहार हैं और बचपन से अब तक ग्लैक्सो खाते-खाते आदमी से नक्क़ारा बन गये हैं। मालूम होता है कि असली नम्बर का फुटबॉल रखा है। यह देव का बच्चा मेहतरों का जमादार यानी सैनिटरी इन्स्पैक्टर है। खोपड़ी पर एक बाल भी नहीं है, शीशे की तरह चँदियाँ चमक रही है। बरेली का रहने वाला है, मुआ पागल होगा।"

मैंने कहा, "तो क्या सब ऐसे ही हैं ?"

कहने लगीं, "बस देखे जाओ। यह लो चौथी तसवीर, आप ताश क़ी गड्डी से निकल कर भागे हैं। चिड़ी कागुलाम तो तुमने सुना ही होगा उसी नस्ल के हैं आप। माशाअल्ला ठेकेदार हैं, दो बीवियाँ खा कर मुझ ग़रीब को खाने के लिए मुँह फैलाये हुए हैं।"

उसके तब्सरों पर निगार का और मेरा हँसी के मारे बुरा हाल था, मगर वह हसीन चेहरे को उस वक़्त निहायत संजीदा बनाये हुये थी और जल जलकर यह तब्सरा कर रही थी। कहने लगी, "यह लो तसवीर, देखो मालूम होता है यतीमखाने में जिन्दगी बसर होती है। अब्बूजान ने 'लीडर' में शादी का इश्तहार दिया था। यह समझे कोचवान की जगह ख़ाली है, झट दरख्वास्त मय तसवीर भेज दी।"

मैंने उस तसवीर को देखकर वापस कर दिया तो उसने एक और तसवीर देते हुए कहा, "आपको मुलाहिज़ा फ़र्माइये और आपका हुदूदेअर्बा समझने की कोशिश कीजिये : मुँह झाड़ सर पहाड़। मालूम यह होता है कि बच्चों को डराने वाला 'जू जू' है। आप हैं तो मालिक उलमौत (यमदूत) की सूरत मगर फ़र्माते हैं तिबाबत, यह, यह देखिये मुआ दारादोश का बच्चा।"

मुझको बोली, "तुम भी देख लेना। ज़रा अम्मीजान कमरे से "हां-हां मैं उड़ा लाऊँ।" यह कहते ही उसके ज़हन में खुदा जाने क्या बात आई कि दौड़कर अम्मीजान के पास पहुंची और उनसे कुछ कह कर फिर आगई।

मैंने पूछा, "क्या कह आई उनसे ?"

कहने लगी, "मैंने उनको चाय बनाने के लिए टाला है यहाँ से। वह जायें तो मैं लाऊँ खत।"

इतने ही में तारा की वाल्दा कमरे से उठकर बावर्चीखाने की तरफ़ गईं और यह बला लपक कर अल्मारी में से एक बण्डल उठा लाई। कहने लगी :

"लो एक-एक करके देखो खत। मगर खत क्या करोगी देखकर, तसवीरें देखो।"

यह कहकर खुद उसने एक तसवीर निकाली और मेरे हाथ में देते हुए कहा :

"यह बेचारे महात्मा गाँधी के छोटे भाई हैं और दस बरस से बरत रखे हुए हैं। देखो तो मुए की हड्डियाँ-पसलियां कोट के अन्दर से दिखाई दे रहीं हैं और मरा जाता है शादी के लिए। मालूम होता है कि अगर शादी न हुई तो जान दे देगा।'

निगार ने कहा, "बहन, मर्द की सूरत नहीं देखी जाती, सीरत देखी जाती है। ऐसा मुहब्बत में बदहवास मियाँ मिलेगा नहीं।"

तारा ने कहा, "खैर आप रहने दीजिये इस ढांचे की सिफ़ारिश करने को। यह देखो दूसरी तसवीर।"

यह कहकर उसने एक दूसरी तसवीर दी और कहने लगी, "यह साहब लड़के के वालिद नहीं बल्कि खुद लड़का है। दाढ़ी पैदाइशी है उससे बेचारे मजबूर थे। नखास (स्थान-विशेष) में कबूतर बेचते हैं। आप फ़र्माते हैं कि मैं लड़की के नाम अपनी जायदाद लिखने को तैयार हूँ जो एक लाख के क़रीब होती है। अबूजान ने जवाब दिया है कि

मैं लड़की की शादी करना चाहता हूँ, लड़की बेचने का कोई ख़याल मेरे ज़हन में नहीं है।"

मैंने उस तसवीर को वापस देते हुए कहा, "और ?"

तारा ने झाँककर अपनी मां को देखते हुए, जो बावर्चीख़ाने में थीं, कहा, "यह लो तीसरी तसवीर—आप डनलप मोटर टायर का इश्तेहार हैं और बचपन से अब तक ग्लैक्सो खाते-खाते आदमी से नक्क़ारा बन गये हैं। मालूम होता है कि असमी नम्बर का फ़ुटबॉल रखा है। यह देव का बच्चा मेहतरों का जमादार यानी सैनिटरी इन्स्पैक्टर है। खोपड़ी पर एक बाल भी नहीं है, शीशे की तरह चँदियाँ चमक रही है। बरेली का रहने वाला है, मुआ पागल होगा।"

मैंने कहा, "तो क्या सब ऐसे ही हैं ?"

कहने लगीं, "बस देखे जाओ। यह लो चौथी तसवीर, आप ताश की गड्डी से निकल कर भागे हैं। चिड़ी कागुलाम तो तुमने सुना ही होगा उसी नस्ल के हैं आप। माशाअल्ला ठेकेदार हैं, दो बीवियाँ खा कर मुझ ग़रीब को खाने के लिए मुँह फैलाये हुए हैं।"

उसके तब्सरों पर निगार का और मेरा हँसी के मारे बुरा हाल था, मगर वह हसीन चेहरे को उस वक़्त निहायत संजीदा बनाये हुये थी और जल जलकर यह तब्सरा कर रही थी। कहने लगी, "यह लो तसवीर, देखो मालूम होता है यतीमख़ाने में जिन्दगी बसर होती है। अब्बूजान ने 'लीडर' में शादी का इश्तहार दिया था। यह समझे कोचवान की जगह ख़ाली है, झट दरख्वास्त मय तसवीर भेज दी।"

मैंने उस तसवीर को देखकर वापस कर दिया तो उसने एक और तसवीर देते हुए कहा, "आपको मुलाहिज़ा फ़र्माइये और आपका हुदूदेअर्बा समझने की कोशिश कीजिये : मुँह झाड़ सर पहाड़। मालूम यह होता है कि बच्चों को डराने वाला 'जू जू' है। आप हैं तो मालिक उलमौत (यमदूत) की सूरत मगर फ़र्माते हैं तिबाबत, यह, यह देखिये मुआ दाग़दोश का बच्चा।"

मुझे हँसी तो आ रही थी, मगर इस 'दाग़दोश' बच्चे पर तो उच्छू हो गया। मैंने कहा, "यह दाग़दोश क्या बला होती है ?"

उसने संजीदगी से कहा, "तुमको नहीं मालूम एक जानवर होता है। देखो बिल्कुल ऐसा ही होता है।"

मैं उस वक़्त तारा के शादाब हुस्नको ही देखरही थी और उसकी शरारत को भी कि वह किस तरह एक-एक तसवीर दिखाये जाती थी और हर तसवीर पर कैसे रिमार्क दे रही थी। उसका हसीन चेहरा इस वक़्त खिला हुआ गुलाब का फूल हो रहा था जिस पर शरारत इस तरह चमक रही थी गोया गुलाब के फूल पर सुनहरी धूप पड़ रही हो। उसने एक तसवीर देते हुए अपने पतले-पतले होंठोंको जुंबिशदी।

"मेरी बहन, तुम्हें ख़ुदा की क़सम ज़रा देखो तो इस मुए को। मालूम होता है कि जैसे आप अख्तू-बख्तू का तमाशा दिखाते हैं, या क़बाब लोग चड़े बेचते हैं।"

मैंने उस तसवीर को देखा तो यह ख़ुशरू जवान की तसवीर थी, शरीफ़जादा मालूम होता था। तन्दुरुस्ती भी अच्छी थी, अंग्रेज़ी लिबास में चश्मा लगाये बैठे हुए किताब इस तरह पढ़ रहे थे कि आँखें बिल्कुल झुकी हुई नहीं थीं बल्कि यह मालूम होता था कि दोनों आँखें मौजूद हैं। मैंने उस तसवीर को देखकर कहा, "तो फिर इसीसे कर ले, यह तो बुरी नहीं है।"

तारा ने अपने ख़ूबसूरत चेहरे पर से अपने सुनहरी बाल हटाते हुए कहा, "अभी सुनो तो सही आपकी सिफ़ात हमीदा कि आप ऐसी जोरू चाहते हैं, जो बिल्कुल मेम की बच्ची हो यानी बेपर्दा बाल कटी हुई, पियानो बजाने की माहिर। गाना भी उम्दा जानती हो, अंग्रेजी गाना जानने वाली को तरजीह दी जायेगी, मोटर चलाना भी जानती हो। मुख़्तसर यह कि इनको स्वदेशी नहीं, बल्कि विलायती बीवी दरकार है।"

निगार ने कहा, "तो इसमें कौन-सी दिक़्क़त है ? तू इन तमाम

बातों की तालीम दो ही महीने में हासिल कर सकती है और बाल मैं आज ही काट दूं।"

तारा ने अपने हसीन चेहरे पर सैकड़ों शिकनें पैदा करते हुए कहा, "मैं क्यों बाल कटवाऊंगी ? मैं ऐसे अंग्रेज़ के बच्चे को जूती की नोक पर मारती हूँ। अब्बूजान ने तो उस मुए खब्ती का खत देखते ही उसको लिख दिया कि आपने ग़लती की कि विलायत से मेम नहीं लाये।" यह कहकर उसने फिर बावर्चीखाने की तरफ़ झांक कर देखा और उस तरफ़ से इत्मिनान करके एक और तस्वीर देते हुए कहा, "आपके माशा अल्लाह एक बीवी और सिरफ़ दर्जन बच्चे पहले से मौजूद हैं और अब दूसरी शादी का शौक़ चर्राया है। ऐसे मर्दों को तो दिल चाहता है कि ऐसी जगह मारा जाये जहां पानी न मिले। सूरत देखो तो इस मुए खबीस की जैसे कोई जल्लाद। आप बच्चा सक़्क़ा के छोटे भाई हैं।"

मैंने कहा, "खैर बुरी हों या भली, मगर तसवीरें हैं दर्जनों। मुझको तुम्हारे खरीदारों की फ़ेहरिस्त तैयार करनी पड़ेगी।"

तारा ने कहा, "नहीं अब दो ही दिन बाकी हैं। यह देखो इस तसवीर पर अब्बूजान बड़ी बुरी तरह फिसले हुए हैं और ग़ालिबन यही हज़रत कामयाब भी हो जायें।"

मैंने उस तसवीर को लेकर देखा ही था कि मेरे हाथ से तसवीर छूट कर गिर पड़ी। हैरत और ताज्जुब के साथ मैंने फिर तसवीर को उठा कर देखा। आँखें जो कुछ देख रही थीं दिल उसके यक़ीन करने से इन्कार कर रहा था। यह मेरे साहब की तसवीर थी जो अबकी जाड़ों में साहब ने खिचवाई थी। उस वक़्त मेरा दिल धड़क रहा था और मैं एक ऐसे आलम में थी कि बयान नहीं कर सकती।

मैंने अपने को संभालकर तारा से कहा, "क्या इनका खत भी है ?"

तारा ने खत देते हुए कहा, "मालूम होता है कि तुमको यह हज़रत पसन्द आ गये।"

मैंने अग़ैर जवाब दिये हुए खत पढ़ा और अपने ताज्जुब को यक़ीन में बदलने के बाद मैं इस नतीजे पर पहुँच गई कि साहब मेरी तकमील तो कर रहे हैं, मगर उसको मेरी ख्वाहिश बनाकर नहीं, बल्कि अपनी ख्वाहिश बना कर; और मुझको फरेब खुर्दगी के आलम (धोखे कीदशा) में मुब्तिला रखकर। इस तसवीर के देखने के बाद ही चाय आ गई और चाय के बाद थोड़ी देर इधर-उधर की बातें करने के बाद हम लोग रुखसत हो गये।

३

तारा के यहाँ से वापसी के बाद ही से मुझको अपने महसूसात को दुनिया में एक इन्क़लाबे-अज़ीम मिला। दुनिया इसपर हैरत करेगी कि आखिर मुझको यह मालूम होकर इस क़दर ताज्जुब और ताज्जुब भी ज़रा तकलीफ़देह क़िस्म का ताज्जुब क्यों था जबकि मैं खुद यह चाहती थी कि मेरे साहब अक़्दे-सानी करके साहबे-औलाद बनें। गोया मुझको तारा के यहाँ जो कुछ मालूल हुआ था वह खुद मेरी ख्वाहिश थी। मगर मैं क्या बताऊँ कि साहब के इस दर्जे-अमल ने मुझको किस क़दर 'गोयम मुश्किल वगरना गोयम मुश्किल'* की कैफ़ियत में मुब्तिला कर दिया था। मुझको खुशी थी। मैं सच कहती हूँ कि इन्तिहाई खुशी थी कि मेरे साहब मेरी इस ख्वाहिश की तकमील (पूर्ति) कर रहे हैं और मज़ीद खुशी इस बात की थी कि वह मेरी इस ख्वाहिश की तकमील मेरी ख्वाहिश के तौर पर नहीं, बल्कि उस ख्वाहिश को अपनी ख्वाहिश बनाकर कर रहे हैं। मगर अफसोस कि उन्होंने इस सिलसिले में मुझको भी निसाइयत (स्त्रीत्व) की उसी पस्ती में देखा

* कहूँ तो मुश्किल, औरन कहूँ तो भी मुश्किल।

जहाँ औरत के लिए मौत से खौफ़नाक दर्जा अगर कोई है तो उनके सर पर सौत लाना और उसकी सौतिया डाह में मुब्तिला करना। इसमें शक नहीं कि यह औरत की फ़ितरत है, मगर दुनिया को किस तरह यक़ीन दिलाऊँ कि मैं पागल सही, दीवानी सही बहरहाल औरत की इस फ़ितरत से ग़ैर मुताल्लिक होकर सच्चे दिल से इस बात के लिए कोशाँ थी कि मेरे साहब मेरे कहने से अपनी एक नई दुल्हन यानी मेरी एक खूबसूरत सौत लायें और उनके यहाँ एक चाँद-सा बेटा पैदा हो, जिसको मैं निहायत फ़ख्र के साथ गोद में लेकर साहब के पास जाऊँ और उनकी गोद में देकर उनसे कहूँ कि :

"हाँ, अब खिड़की की तरफ़ देखकर आहें भरिये।" और हँस-हँस कर उनसे कहूँ कि "अल्लाह-अल्लाह, आपको भी औलाद की कैसी तमन्ना थी।"

मगर साहब ने मेरे इन तमाम वलवलों को सर्द कर दिया था। बात दरअसल यह थी कि उनको मुझपर ऐतबार न था। वह औरत को इस हद तक दग़ाबाज समझे हुए थे। गोया मैं रस्मन उनसे अक़्दे-सानी के लिए कह रही हूँ। मेरा कौल मेरे फ़ेल से जुदागाना है। मैं जो कुछ अपनी ख्वाहिश ज़ाहिर कर रही थी वह दरअसल मेरी ख्वाहिश नहीं है, बल्कि मैं उससे दरपर्दा पनाह चाहती हूँ और यही सब कुछ समझकर मेरे इस इसरार को फ़रेब जानते थे। और यह वजह थी कि वह वाक़ई अक़्दे-सानी करना चाहते थे और कर रहे थे मगर मुझसे छिपकर, मुझसे चुराकर और मुझको तारीकी में रखकर।"

मैं इन्हीं खयालात में मुस्तग़रक थी कि साहब ने कमरे में दाखिल होकर अपने मख्सूस अन्दाज़ से कहा, "हल्लो मिस्टर रज्जो।"

और यह कहकर मेरे दोनों शाने पकड़कर हिलाने लगे। मैंने भी जबरदस्ती हँसने की कोशिश की मगर बावजूद कोशिश के मुझको हँसी नहीं आई। यहाँ तक कि मैं तारा और निगार के यहाँ के तमाम मनाज़िर भी ज़हन से निकाल कर उनकी तरफ़ मुतवज्जे होने पर

मजबूर हो गई। मैंने अपने इज़महलाल (संताप) और परेशानी के मुताल्लिक़ चालाकी के साथ बचा-बचाकर झूठी क़समें भी खाईं और उनको हर तरह यक़ीन भी दिला दिया, मगर वह एक न माने और बराबर यही कहते रहे कि "आज ज़रूर मेरी रज़्ज़ो ने सत्याग्रह किया है।" यहाँ तक कि न तो उन्होंने मुझको खाना लाने के लिए उठने दिया और न किसी और काम के लिए। बल्कि वह यही कहते रहे कि मैं तो उस वक़्त तक खाना ही न खाऊँगा जब तक कि मुझको यह न मालूम हो जाये कि किसने मेरी रज़्ज़ो को आँख दिखाई और किसकी मुझको आँख निकालनी है। मैंने आखिर हँसकर उनसे कह दिया कि अच्छा मैं आपको सब कुछ बताऊँगी बशर्ते कि आप इस वक़्त इत्मिनान से पहले खाना खालें और उसके बाद जब मैं आपसे कुछ कहूं तो उसपर संजीदगी और हमदर्दी से ग़ौर करें। साहब इस पर राज़ी हो गये। लिहाज़ा पहले तो हम दोनों ने खाना खाया, मैंने महज़ इसलिए खाना खाया कि साहब भी खालें और साहब ने इसलिए खाया कि उनको मेरी पज़मुर्दगी (मुर्झाहट) की वजह मालूम करना था। उसके बाद ही साहब सिगार सुलगा कर आराम कुर्सी पर लेट गये और मैं पान बनाने लगी। साहब ने इतनी ही देर में सैकड़ों तक़ाज़े कर डाले; यहाँ तक कि जब मैं बराबर पानदान की तरफ़ मुतवज्जे रही तो आराम-कुर्सी से उठकर, मेरे दोनों शाने पकड़ कर मुझको आराम-कुर्सी के सिरे पर बैठा दिया और खुद फिर आराम कुर्सी पर लेटकर बोले :

'हाँ साहब फ़र्माइये।"

मैंने कहा, "मैं अपनी खामोशी की यह वजह बतलाने वाली थी कि दरअसल कोई वजह ही नहीं।"

साहब ने आँखें निकालकर कहा, "यह ग़लत है जनाब। हमारे और आपके दरम्यान पहले ही मुआहिदा (क़रार) हो चुका है कि संजीदगी के साथ आप वजह बतायेंगी और मैं संजीदगी के साथ उस

पर ग़ौर करूँगा।"

मैंने अपने को यकायक संजीदा बनाते हुये कहा, "अच्छा तो मैं अब संजीदा हूँ, मगर आप भी संजीदा हो जाइये। इस वक़्त बात टालने का खयाल अपने दिल में न लाइयेगा।"

कहने लगे, "बहुत अच्छा सरकार।" यह कहकर आँखें बन्द करके इस अन्दाज़ से लेट गये कि गोया मैं जो कुछ कहूँगी उसको वह वाक़ई और ग़ौर के साथ सुनेंगे। मैंने उनकी बन्द आँखों के बाद उनके चेहरे को देखा जिस पर आज वह मासूमियत रौंदी हुई पड़ी थी जो आजसे पहले मुझको हमेशा नजर आई और जिसने मुझको हमेशा एक आलमे-फ़रेब में मुब्तिला रखा। बहरहाल मुझको तो अभी इन हज़रत के दिल का चोर पकड़ना था, लिहाज़ा मैंने निहायत संजीदगी के साथ कहा, "मैं आज आख़िरी और क़तई तौर पर अपनी इस दरख्वास्त पर आपका फ़ैसला सुनना चाहती हूँ कि आप अपने लिए न सही, मेरे लिये अपना अक़्दे-सानी करलें और महज़ मेरी वजह से अपनी नस्ल को अपने तक खतम न करें।"

अल्लाह रे शातिर चोर कि मेरे इन अल्फ़ाज़ के बाद भी साहब के चेहरे पर कोई तग़य्युर (परिवर्तन) पैदा नहीं हुआ। गोया मैं जो कुछ तारा के यहाँ सुनकर, बल्कि अपनी आँखों से देखकर आई हूँ वह सब मेरा तवाहम (भ्रम) है। साहिब ने इन्तिहाई मतानत केसाथ कहा "रज़्ज़ो, अफ़सोस है कि तुमने फिरवही तकलीफ़देह जिक्रछेड़ा, जिससे मैं हमेशा भागता हूँ। मगर मैं आज तुमको अपना क़तई जवाब दिये देताहूँ औरवह यहहै किमैंअपनी रज़्ज़ो के ऊपर सौत नहीं ला सकता।"

यक़ीन जानिये कि साहब के इन मुहब्बत भरे अल्फ़ाज पर मुझको ख़ुशी के मारे पागल हो जाना चाहिये था, जैसा कि मैं पहले उनके इस जज़्ब-ए-मुहब्बत (प्रेम-भाव) पर फ़ख्र आमेज़ (गौरव पूर्ण) अज़-ख़ुद रफ़्तगी के आलम में अक्सर मुब्तिला हो गई हूँ। मगर आज तो मैं जानती थी कि मुझको निहायत शातिराना तरीक़े पर बेवक़ूफ़ बनाने

मजबूर हो गई। मैंने अपने इज़्महलाल (संताप) और परेशानी के मुताल्लिक़ चालाकी के साथ बचा-बचाकर झूठी क़समें भी खाईं और उनको हर तरह यक़ीन भी दिला दिया, मगर वह एक न माने और बराबर यही कहते रहे कि "आज ज़रूर मेरी रज्जो ने सत्याग्रह किया है।" यहाँ तक कि न तो उन्होंने मुझको खाना लाने के लिए उठने दिया और न किसी और काम के लिए। बल्कि वह यही कहते रहे कि मैं तो उस वक़्त तक खाना ही न खाऊँगा जब तक कि मुझको यह न मालूम हो जाये कि किसने मेरी रज़्ज़ो को आँख दिखाई और किसकी मुझको आँख निकालनी है। मैंने आख़िर हँसकर उनसे कह दिया कि अच्छा मैं आपको सब कुछ बताऊँगी बशर्ते कि आप इस वक़्त इत्मिनान से पहले खाना खालें और उसके बाद जब मैं आपसे कुछ कहूं तो उसपर संजीदगी और हमदर्दी से ग़ौर करें। साहब इस पर राज़ी हो गये। लिहाज़ा पहले तो हम दोनों ने खाना खाया, मैंने महज़ इसलिए खाना खाया कि साहब भी खालें और साहब ने इसलिए खाया कि उनको मेरी पज़मुर्दगी (मुर्झाहट) की वजह मालूम करना था। उसके बाद ही साहब सिगार सुलगा कर आराम कुर्सी पर लेट गये और मैं पान बनाने लगी। साहब ने इतनी ही देर में सैकड़ों तक़ाज़े कर डाले; यहाँ तक कि जब मैं बराबर पानदान की तरफ़ मुतवज्जे रही तो आराम-कुर्सी से उठकर, मेरे दोनों शाने पकड़ कर मुझको आराम-कुर्सी के सिरे पर बैठा दिया और खुद फिर आराम कुर्सी पर लेटकर बोले :

'हां साहब फ़र्माइये।"

मैंने कहा, "मैं अपनी खामोशी की यह वजह बतलाने वाली थी कि दरअसल कोई वजह ही नहीं।"

साहब ने आँखें निकालकर कहा, "यह ग़लत है जनाब। हमारे और आपके दरम्यान पहले ही मुआहिदा (क़रार) हो चुका है कि संजीदगी के साथ आप वजह बतायेंगी और मैं संजीदगी के साथ उस

पर ग़ौर करूँगा।"

मैंने अपने को यकायक संजीदा बनाते हुये कहा, "अच्छा तो मैं अब संजीदा हूँ, मगर आप भी संजीदा हो जाइये। इस वक़्त बात टालने का ख़याल अपने दिल में न लाइयेगा।"

कहने लगे, "बहुत अच्छा सरकार।" यह कहकर आँखें बन्द करके इस अन्दाज़ से लेट गये कि गोया मैं जो कुछ कहूँगी उसको वह वाक़ई और ग़ौर के साथ सुनेंगे। मैंने उनकी बन्द आँखों के बाद उनके चेहरे को देखा जिस पर आज वह मासूमियत रौंदी हुई पड़ी थी जो आजसे पहले मुझको हमेशा नज़र आई और जिसने मुझको हमेशा एक आलमे-फ़रेब में मुब्तिला रखा। बहरहाल मुझको तो अभी इन हज़रत के दिल का चोर पकड़ना था, लिहाज़ा मैंने निहायत संजीदगी के साथ कहा, "मैं आज आख़िरी और क़तई तौर पर अपनी इस दरख़्वास्त पर आपका फ़ैसला सुनना चाहती हूँ कि आप अपने लिए न सही, मेरे लिये अपना अक़्दे-सानी करलें और महज़ मेरी वजह से अपनी नस्ल को अपने तक ख़त्म न करें।"

अल्लाह रे शातिर चोर कि मेरे इन अल्फ़ाज के बाद भी साहब के चेहरे पर कोई तग़य्युर (परिवर्तन) पैदा नहीं हुआ। गोया मैं जो कुछ तारा के यहाँ सुनकर, बल्कि अपनी आँखों से देखकर आई हूँ वह सब मेरा तवाहम (भ्रम) है। साहिब ने इन्तिहाई मतानत केसाथ कहा "रज़्ज़ो, अफ़सोस है कि तुमने फिरवही तकलीफ़देह ज़िक्रछेड़ा, जिससे मैं हमेशा भागता हूँ। मगर मैं आज तुमको अपना क़तई जवाब दिये देताहूँ औरवह यहहै कि मैंअपनी रज़्ज़ो के ऊपर सौत नहीं ला सकता।"

यक़ीन जानिये कि साहब के इन मुहब्बत भरे अल्फ़ाज पर मुझको ख़ुशी के मारे पागल हो जाना चाहिये था, जैसा कि मैं पहले उनके इस जज़्ब-ए-मुहब्बत (प्रेम-भाव) पर फ़ख्र आमेज़ (गौरव पूर्ण) अज़-ख़ुद रफ़्तगी के आलम में अक्सर मुब्तिला हो गई हूँ। मगर आज तो मैं जानती थी कि मुझको निहायत शातिराना तरीक़े पर बेवक़ूफ़ बनाने

और मुस्तक़बिल से वेखबर रखने की कोशिश की जा रही है। लिहाजा मैं भी तै कर चुकी थी कि आज या तो इक़बाले-जुर्म कराऊँगी वन खुद ही भांडा फोड़ूंगी। हालांकि मुझको अभी ज़ब्त से काम लेन चाहिये था और दरअसल ज़रूरत थी सब्र और इन्तिज़ार की, मगर मेरा तो यह हाल था कि गोया पेट में चूहे कूद रहे थे, बहरहाल मैंने साहब का हाथ अपने हाथ में लेते हुए कहा, "आप मुझ पर सौत न लाइये लेकिन अगर मैं अपने ऊपर खुद ही ले आऊं तो ?"

साहब ने कहा, "क्या मानी इसके ?"

मैंने कहा, "मेरा मतलब यह है कि आप अपनी खुशी से न कीजिये, मैं अपनी खुशी से आपकी शादी कर दूं।"

साहब ने घबराकर उठते हुए कहा, "देखो रज़्ज़ो, अब मैं अपने मुआहिदे पर क़ायम नहीं रह सकता। तुमने निहायत मोहमल बात के लिए मुझसे संजीदगी का वादा लिया है।"

मैंने उनका हाथ पकड़कर ज़ोर देते हुए कहा, "आखिर आप मुझ को यह बता दीजिये कि आप मुझ पर सौत लाना क्यों नहीं चाहते ? क्या महज़ इसलिए कि बाज़ छुई-मुई क़िस्म की औरतें महज़ सौत का नाम सुनकर कुम्हला जाती हैं और बाज़ औरतें सौत का मतलब समझती हैं मौत ?"

साहब ने कहा, "अच्छा तो तुम वाक़ई संजीदगी के साथ मुझसे सुनना चाहती हो तो सुनो कि मैं तुमसे कभी कम-से-कम मिक़दार में भी खफ़ा नहीं हुआ। लेकिन अगर मैं तुम से इन्तिहाई बेज़ार भी होता तो तुमको इस क़दर सख्त होकर आखिरी सज़ा क़यामत तक नहीं दे सकता था, जिसके लिए तुम अपनी हिमाक़त से मुसिर हो। औरत के लिए इससे बढ़कर दुनिया में कोई अज़ाब नहीं हो सकता कि उसका शौहर उसके अलावा किसी और का भी शौहर हो और उसका शौहर उसके अलावा किसी और को भी मुहब्बत भरी नज़र से देखे। हमारी मुआशरत ने औरत को जो हुक़ूक़ दिये हैं वह तक़री-

चन न होने के बराबर हैं, लेकिन औरत इस हक़तलफ़ी पर भी महज़ इसलिए ख़ुश है कि तमाम हुक़ूक़ता के मालिक यानी मर्द की मिल्कियत ख़ुद उसको हासिल है। वह सिर्फ़ इसी यक़ीन पर ज़िन्दा रह सकती है कि उसके शौहर के जुमला हुक़ूक़ उसके नाम महफ़ूज़ हैं और सिर्फ़ शौहर ही एक ऐसी चीज़ है जो तक़सीम होने वाली नहीं है ?"

बावजूद इसके कि मैं साहब को उनके असली रंग में देख रही थी और बावजूद इसके कि अब उनका यह मुहब्बत वाला बहरूप मेरी नज़रों में एक लफ़्ज़-बेमानी होकर रह गया था, मगर मैं अपने तमाम जज़्बात और तास्सुरात के साथ इस वक़्त भी उसी जगह थी जहाँ आज से पहले मुझको देखा गया है। मैं आपसे सच कहती हूँ कि इस वक़्त की तक़दीर से मेरा दिल चाहता था कि इस क़दर रोऊँ और इस क़दर अपने दिल की भड़ास निकालूं कि मैं उस बोझ से सुबुकदोश हो जाऊँ जो तारा के यहाँ से वापसी के बाद से मुस्तक़िल तौर पर मुझ को कुचले देता। 'सिर्फ़ शौहर ही एक ऐसी चीज़ है जो तक़सीम होने वाली नहीं।' किस क़दर सच्ची बात है और फिर लुत्फ़ यह है कि मेरे साहब को ये तमाम बातें मालूम हैं जिनके बाद उन्होंने मेरी बिला शिरकते-ग़ैरे (दूसरे के साझे के बिना) मिल्कियत पर डाका डाला है। उफ़ रे संगदिल, वफ़ा ना आश्ना मर्द तू सचमुच एक मुअम्मा है! और तेरा ऐसा पत्थर दिल रखने वाला क़यामत तक औरत के लतीफ़ और नाज़ुक एहसासात को समझ ही नहीं सकता। अब आप ही देखिये कि मैं भी यही चाहती थी कि साहब अक़्दे-सानी कर लें, और ख़ुद साहब भी वही कर रहे थे, मगर फ़र्क़ यह था कि वह मेरे साथ शादी करने के बाद अब ख़ुद भी अपने नहीं रहे हैं। बल्कि मेरे और सिर्फ़ मेरे हैं, लिहाज़ा मैं ही अगर चाहूँ तो ज़रूरतन अपनी मिल्कियत में किसी और को शरीक कर लूँ वर्ना न तो किसी को इसका हक़ पहुँचता है और न ख़ुद साहब को इसका इख़्तियार है। मैं अपने इस हक़ का इस्तेमाल निहायत बुज़दिली के साथ करना चाहती थी और

अपने हाथों अपने साहब को गोया ऐसी लिमिटेड कम्पनी बना रही थी जिसके दो बराबर के मालिक हों, एक मैं और दूसरी आबुर्दा (आने वाली) सौत। मगर साहब ने मेरे इस दावे को ठुकरा दिया। मेरे इस पिन्दार (अभिमान) को पाश-पाश कर दिया और मेरे इस ज़ोम (अहंकार) का सर नीचा कर दिया। यानि उन्होंने मुझको अपनी रूहानी मालिका न समझकर अपने को अपनी जात का मालिक समझा और मुझको बाख़बर किये वग़ैर मेरे हुक़ूक़ पर निहायत संगदिली के साथ डाका डालने का इरादा कर लिया। और फिर आज आप ही फ़र्मा रहे हैं कि शौहर ही एक ऐसी चीज़ है जो तक़सीम होने वाली नहीं।' गोया आप इस कुल्लिये से मुस्तस्ना (अपवाद) क़िस्म के शौहर थे। बहरहाल में उन झूठे वादों और शकर में लिपटी हुई कुनैन की गोलियों को निहायत ज़ब्तो-तहम्मुल के साथ बर्दाश्त करती रही। साहब ने अपना खुत्ब-ए-शौहराना (पति का भाषण) जारी रखते हुए कहा :

"मैं एक से ज्यादा शादी को मज़हबी हैसियत से ख्वाह कैसा ही क्यों न समझूं मगर मौजूदा दौरे-जिन्दगी को देखते हुए मर्दों के सरासर ज्यादती बल्कि अक्सर औक़ात (बहुधा) दरिन्दगी समझता हूँ. फिर गज़ब यह है कि आप मेरी शादी अपने हाथों करना चाहती है गोया : रज्जो, तुम इसको अपनी फ़राखदिली (उदारता), वसी-उन्नज़री (दृष्टि-विस्तार) बुलन्दी और रफ़अने-ख्याल (विचारों की उच्चता) समझती हो, मगर मैं इसको तुम्हारी वह हिमाक़त समझता हूँ जिसके मातहत तुम खुदकुशी पर आमादा हो रही हो। औरत ! मैं दावे के साथ कहता हूँ कि आज तक फ़ितरत ने कोई भी औरत ऐसी पैदा नहीं की है, जिसने सौतन की मुसीबत को खन्दापेशानी के साथ बर्दाशत किया हो। मुझको अफ़सोस है कि मैं तुम्हारे इस दावे को तुम्हारी नातजुर्बाकारी, हिमाक़त और पागलपन समझता हूँ। अभी तुम ऊंट के ऊपर बैठकर अपने को बहुत बुलन्द समझ रही हो मगर तुम्हारा

ऊँट पहाड़ के नीचे नहीं आया है। मेहरबानी फ़र्माकर इस खयाल को ज़हन से निकाल डालो और अपने को इस आलम में देखने की आरज़ू न करो कि तुम्हारी यह हँसती हुई गुलिस्ताँ-बकिनार ज़िन्दगी ख़ून के आँसू रुलाने वाली खारदार ज़िन्दगी बन जाये। मैं हमेशा तुम्हारी इस तजवीज़ पर हँसा करता हूँ, मगर मुझको तुम्हारे इस भोलेपन पर तरस भी आता है कि तुम अपना दर्द अपने हाथों खरीदना चाहती हो। हो बड़ी गधी ! रज़्ज़ो चाहे बुरा मानो, और माफ़ करना थोड़ी सी पगली भी। बल्कि मुँह पर कहना तो खुशामद होगी, मगर थोड़ी सी चुग़द भी हो। बहरहाल अब मेरा दिमाग़ न खाना !"

देखिये साहब ने वही बातें कहीं ना ? यानी वह मेरे इस दावे को झूठा समझते थे और उनको इसका पूरा-पूरा यकीन था कि दुनिया की कोई औरत यह बला अपने सर नहीं ले सकती। खैर इसका तजुर्बा तो उनको बाद में होगा, मगर अब मैं भी उनको यह दिखाना चाहती हूँ कि औरत अगर अपने शौहर को खुश रखना चाहे तो शौहर की ख़ुशी पर अपने इस जज़्बे को भी किस खन्दापेशानी (प्रसन्न चित्तता) के साथ क़ुरबान कर सकती है। मैंने साहब से कहा :

"देखिये तो आप इसको मेरी बेवक़ूफी समझिये या नादानी, मगर मैं आपको अपने और आपके बयान में एक निहायत बारीक़-सा फ़र्क़ दिखाना चाहती हूँ और वह यह है कि बहैसियत एक औरत के मैं दुनिया की औरतों से क़तअन मुख्तलिफ़ नहीं हूँ और न उस सौतन वाले क़िस्से में मेरे महसूसात दुनिया की औरतों से जुदागाना हैं। यकीनन कोई औरत इसको बर्दाश्त नहीं कर सकती कि उसका शौहर उसकी तरफ़ से नज़रें फेरकर किसी और को अपना मरकज़े-नज़र बनाये। लारीब (निस्सन्देह) कि यह दर्जा औरत के लिए मौत से भी ज़्यादा तकलीफ़देह दर्जा है, मगर यह तकलीफ़ उन औरतों को होती हैं जिनके शौहर आप जैसे नहीं होते, बल्कि वह ज़रूरत से या बिला ज़रूरत जिस तरह दिल चाहता है बेक़ुसूर बीवी [illegible]पनी निगाहे-

लुत्फ़ से महरूम बनाकर किसी और खुशनसीब औरत को उसका ज़बरदस्ती हक़दार बना देते हैं। ऐसी हालत में उस महरूम-उल-क़िस्मत (अभागी) औरत का सौत को मौत के बराबर समझना यक़ीनन हक़बजानिब (न्यायोचित) है मगर खुदा-न-ख्वास्ता मेरा शौहर दरिन्दा नहीं है जो इस दरिन्दगी के साथ मुझ पर सितम तोड़ेगा कि मुझको अपनी तबाही का शुब्हा भी न हो और मेरी दुनिया यकायक बदल जाये। यानी नागहानी तौर पर सौत मुझ पर क़यामत की तरह नाज़िल कर दी जाये। मैं तो खुद ज़बरदस्ती आपको इस तरफ़ मुतवज्जे कर रही हूँ। आपको अपना समझकर अपने इस हक़ को खुद ही इस्तेमाल करना चाहती हूँ कि अपने हाथों आपको दूसरे के सुपुर्द करूँ, बल्कि मैं तो आपकी हूँ ही, मैं गोया आपकी नई दुल्हन इसलिए लाऊँगी कि मुझको एक असिस्टैण्ट मिल जाए। ऐसी हालत में मेरे जलने या मेरे रोने या मेरे मरने का कौन-सा इमकान है? अलबत्ता आप अगर मुझको फ़रेब देकर, मुझसे छुपाकर चुपके-चुपके खुद ही अपनी शादी रचा लें तो बेशक यह सवाल पैदा हो सकता है कि मैंने अपने हक़ूक़ खुद ही किसी को नहीं दिये, बल्कि आपने नाजायज़ तौर पर महज़ मुझको कमज़ोर समझकर मेरे हुक़ूक़ पर डाका डाला है। मगर खुदा-न-ख्वास्ता आप खुद तो इस तरफ़ मुतवज्ज़े ही नहीं हो रहे हैं और न इस हद तक इन्सानियत सोज़ ज़ुल्म आप रवा रख सकते हैं। यह तो मेरी ख्वाहिश है........।"

साहब ने अपनी पेशानी पर दो-चार शिकनें पैदा करके एक झटके के साथ आराम कुर्सी छोड़ दी और अपने सर के बालों को मरोड़ते हुए बोले, "अच्छा खैर छोड़ो इस ज़िक्र को, मैं ग़ौर करूँगा। तुम तो बहुत तकलीफ़देह हद तक इस क़िस्से को तूल देती हो। मैं तो परेशान हो गया।"

यह कहते हुए साहब पर्दा उठाकर बाहर चले गये और यहाँ मैंने दिल-ही-दिल में हँसकर कहा :

"तुम मुझको शकर में लपेटकर कुनैन खिलाओ, मगर मैं तुमको कुनैन का सत पिलाकर रहूँगी। सच्ची बात पर कैसा नाचे और कैसा ताव आया।"

४

अब मुझको रस्मन नहीं, बल्कि इन्तिज़ामन इसकी ज़रूरत थी कि तारा से बराबर मिलती रहूँ ताकि साहब की नक़्लो-हरकत का मुझको इल्म होता रहे, जो इस सिलसिले में मुझसे छुपाकर फ़र्मा रहे थे। लेकिन बराहेरास्त तारा से मिलना, उसके यहाँ जाना और उसको अपने यहाँ बुलाना क़रीने-मस्लिहत (समयोचित) न था और इस तरह भाँडा फूट जाने का अंदेशा था। मैं दरअसल एक तरफ़ तो साहब को उससे लाइल्म ही रखा चाहती थी कि वह मुझसे मेरी ही एक सहेली को मेरे ऊपर सौत बनाकर लाने की कोशिशें कर रहे हैं और दूसरी तरफ़ तारा को भी यह खबर न करना चाहती थी कि मैं ही उसकी होने वाली सौत हूँ। लिहाज़ा मैंने यही मुनासिब समझा कि इस सिल-सिले की बीच की कड़ी निगार को बनाया जाये और मैं उसको अपना राज़दार बना लूँ। लिहाज़ा यह सोचकर मैंने निगार को लिख भेजा कि मेरा दिल तुमसे मिलने को चाहता है। आज ही थोड़ी देर के लिए आजाओ, बहुत सी ज़रूरी बातें भी करनी हैं। उस खत के जवाब में मेरी प्यारी सहेली आ मौजूद हुई। निगार के आने के बाद मैंने साहब को निकाला घर से कि तशरीफ़ ले जाइये और निगार को अपने कमरे में लाकर इधर-उधर की गुफ़्तगू शुरू कर दी—वही स्कूल की बातें, वही तारा, शकुन्तला और दूसरी लड़कियों के तज़करे। वही अपनी शरा-रतों के क़िस्से और वह उस्तादनियों के ज़िक्र शुरू हो गये। अपनी उस

ज़माने की हिमाक़तें याद करके हम दोनों देर तक हँसते-हँसाते रहे, आखिर निगार ने पूछा, "हाँ वह क्या बातें थीं जो आप मुझसे करना चाहती थीं और जिनके लिए आज मुझको ऐसी तकलीफ दी कि मैंने तुम्हारे बहनोई साहब बहादुर को भी क़ैद कर दिया और सीधी यहाँ चली आई।"

मैंने हँसते हुए कहा, "भाई साहब को क़ैद कर दिया, वह कैसे ?"

निगार ने कहा, "जी हाँ। जिस वक़्त तुम्हारा पर्चा पहुँचा है, आप आईने के सामने खड़े हुए टाई बाँध रहे थे। मैंने पर्चा देखते ही कहा, "आपको बहक़्क़े-रज़िया बेगम गिरफ़्तार किया जाता है।"

कहने लगे, "रज़िया के हक़ में गिरफ़्तार किया जाता है। ज़हे क़िस्मत ...।"

मैंने बात काटकर कहा, "तुम ही तो मज़ाक उड़वाती हो मेरा।"

निगार ने कहा, "हाँ तो मैंने तुम्हारा पर्चा पढ़कर उनको सुना दिया और फिर कहा कि मै तो जाती हूँ। अब आप बैठिये बच्चों के पास।"

कहने लगे, "बच्चों को भी लेती जाओ ना।"

मैंने कहा, "जी नहीं, अगर आप रख सकते हो तो इनको रख लीजिये, वर्ना मैं नौकर के पास बाहर भिजवा दूं।" मजबूरन कहने लगे कि "बेहतर है साहब आपकी सहेली के लिए जहाँ सब कुछ क़ुबूल है वहाँ यह भी सही।"

मैंने कहा, "हैं बड़े हज़रत ! गोया ऐसे ही तो मेरे इश्क़ में मुब्तला हैं।"

निगार ने कहा, "जी हाँ, हरेक से आपको ऐसा ही इश्क़ होता है। बहरहाल मैंने उनको तो किया क़ैद बच्चों की देखभाल के लिए और खुद चली आई। बात यह है कि अब मुझको पूरा इत्मिनान रहेगा। मै सच कहती हूँ रज़्ज़ो कि उनमें बाप बनने से ज़्यादा माँ बनने की सलाहियत है। बच्चों को ऐसा रखते हैं कि कोई औरत क्या रखेगी।

अब मेरी अदममौजूदगी (अनुपस्थिति) में नहलायेंगे, उनके कपड़े बदलेंगे, बड़े बच्चे को खाना खिलायेंगे, छोटे को दूध बनवाकर पिलायेंगे। और बच्चे भी उनके पास ऐसे खुश रहते हैं कि गोया मेरी तो कोई ज़रूरत ही नहीं। अच्छा खैर ये सब बातें तो हैं ही, बताओ कि क्या बात थी आखिर?"

मैंने निगार की गर्दन में बांहें डालकर कहा, "प्यारी निगार, मुझको तुमसे यह कहना तो न चाहिए, मगर कहती हूँ कि तुमसे जिस सिलसिले में गुफ़्तगू करने के लिए मैंने तुमको बुलाया है वह फ़िलहाल एक निहायत राज़ की बात है। लिहाजा तुम इसको अपने ही तक रखना। यहाँ तक कि तारा से भी कुछ न कहना और सिर्फ़ यही नहीं, बल्कि इस सिलसिले में तुमको सिर्फ़ यही समझना पड़ेगा कि तुम सिर्फ़ मेरी प्यारी बहन हो, तारा की नहीं। दूसरी बात यह है कि जो बात मैं कहने वाली हूँ उसके सिलसिले में तुमको मुझसे मुहब्बत की ज़रूरत तो है लेकिन अंधी मुहब्बत और ग़ैर सियासी हमदर्दी की ज़रूरत नहीं।"

निगार ने कहा, "अच्छा, अच्छा, कहो तो सही कुछ।"

मैंने कहा, "बहन तुमको मालूम है किमेरीशादीको इतना ज़माना हो चुका है मगर अब तक मेरे साहब के इस अरमान की तकमील नहीं हो सकी कि वह साहबे-औलाद होते। उनको जिस क़दर इसका अरमान है उसका अंदाज़ा सिर्फ़ मैं ही कर सकती हूँ। हालाँकि वह ज़ुबान से कभी कुछ नहीं कहते बल्कि अगर कोई और भी कहता है तो निहायत ख़ूबसूरती के साथ इस बहस को टाल देते हैं। मगर अब तो हाल यह है कि औलाद का नाम सुनकर उनके चेहरे का रंग उड़ जाता है और वह कुछ कुम्हलाकर रह जाते हैं। मैंने इस सिलसिले में निहायत संजीदगी के साथ ग़ौर किया और काफ़ी ग़ौरो-फ़िक्र के बाद इस नतीजे पर पहुँची कि उनको एक शादी और कर लेनी चाहिये।"

निगार ने बात काटकर कहा, "पागल हुई हो तुम तो। शादी कर लेना चाहिये उनको! चली वहाँ से शौहर की शादी कराने।"

मैंने कहा, "बहन यह मेरा पागलपन नहीं है, बल्कि मैं तो यह समझती हूँ कि यह मेरा कारनामा होगा। मैं दरअसल अपने शौहर की खुशनूदी चाहती हूँ कि और अपने शौहर की मर्ज़ी पर अपनी खुशी को कुरबान करना अपना फ़र्ज़ समझती हूँ।"

निगार ने फिर बात काटकर कहा, "तो क्या भाई साहब की मर्ज़ी है कि वह दूसरी शादी करलें ?'

मैंने कहा, "नहीं उनकी मर्ज़ी तो नहीं है, अलबत्ता औलाद की ख्वाहिश उनका वाहिद अरमान बनकर रह गई है और उनकी इस ख्वाहिश की तकमील मेरी जात से नामुमकिन है तो मैं इसको अपना फ़र्ज़ समझती हूँ कि उनकी दूसरी शादी कराके उनकी इस ख्वाहिश की तक़मील का सामान करूँ······।"

निगार ने गर्दन हिलाकर कहा, "उहँ हूँ,यह तुम्हारा बचपन और नातजुर्बेकारी है। कहीं ऐसा खयाल भी दिल में न लाना, याद रख रज्जो कि ज़िन्दगी दूभर हो जायेगी, रोते न बन पड़ेगा। तुम अपनी ऐसी खुशगवारज़िन्दगी कोअपने हाथों मुसीबत की ज़िन्दगी न बनाओ। खुदा बचाये सौत की मुसीबत से हर औरत को। बहन मेरे तो रोंगटे खड़े हो जाते हैं। मैं तो यह कहती हूँ कि जिस पर सौत की मुसीबत पड़ने वाली हो, वह इस मुसीबत का मुकाबला करने से पहले ही अगर मर जाये तो यही सब कुछ है।"

मैंने हँसकर कहा, "सुनो तो सही, बड़े-बड़े क़िस्से हैं, अभी तुमने सुना ही क्या है ? मैंने साहब से मुताद्दिद मर्तबा निहायत संजीदगी से मुसिर होकर दूसरी शादी करने के लिए कहा।"

निगार ने अपनी पेशानी पर हाथ मार कर कहा, "कह दिया तुमने उनसे, और मज़ाक़ में भी नहीं सचमुच ? अल्लाह रे तुम्हारे दीदे ! शाबाश है तुमको।"

मैंने निगार को चुप करके कहा, "फिर वही, पहले पूरा क़िस्सा सुन तो लो। मैंने जब दो-एक मर्तबा कहा तो मज़ाक़ में टालते रहे।

उसके बाद जब मेरा इसरार (आग्रह) बहुत बढ़ा तो उलझने लगे और क़स्म खा गये कि क़यामत तक नहीं हो सकता। आख़िर में यह ज़िक्र उनकी चिढ़ बन गया और आजकल भी जहाँ मेरे मुँह से यह जिक्र निकला, फ़ौरन रूठ जाते हैं और निहायत नागवारी के साथ इस क़िस्से को ख़त्म करके या तो बाहर चले जाते हैं या अख़बार वग़ैरा पढ़ने लगते हैं। मुख़्तसर यह कि इस बहस पर ग़ौर करने के लिए भी तैयार नहीं होते।"

निगार ने कहा, "बहन तुम ख़ुश क़िस्मत हो कि ऐसा शौहर तुमको मिला है मोतियों में तोलने के लायक़। मैं सच कहती हूँ कि तुम्हारे बहनोई की तरफ़ से मुझको पूरा इत्मिनान है। मैं जानती हूँ कि वह फ़िदवी क़िस्म के शौहरों में से हैं, आदमी भी उनको कम समझती हूँ, अल्लाह मियाँ की गाय हैं। यह सब कुछ सही, मगर मेरी यह हिम्मत नहीं कि मैं उनसे दूसरी शादी के लिए कहूँ और न मुझको किसी मर्द की तरफ़ से यह इत्मिनान हो सकता है कि उससे दूसरी शादी के लिए कहा जाये और ख़ुद उसकी बीवी इसरार के साथ कहे और जबरदस्ती शादी कराना चाहे और वह इन्कार कर दे। मगर सचमुच तुमको फ़रिश्ता मिला है, फ़रिश्ता।"

मैंने हँसकर कहा, "अच्छा यह सब सुन चुकी। अब जरा इस फ़रिश्ते की शरारत तो देखो कि मुझसे तो अब तक यह इन्कार और उधर मेरी इस ख़्वाहिश की तकमील चुपके-ही-चुपके मुझको बाइल्म रखकर फ़रमाने की फ़िक्र में हैं।"

निगार ने एकदम से बिजली गिरने की तरह उछलकर कहा, "ऐ है!"

मैंने कहा, "उस रोज़ मैं तुम्हारे साथ तारा के यहाँ गई थी ना? वहीं मुझको इन हज़रत की इस चोरी का इल्म हुआ। तारा ने जो मुझको तमाम ख़ुतूत और तसवीरें दिखाईं......उनमें की आख़िरी तसवीर जिसके मुताल्लिक तारा ने यह कहा था कि उसीको मंज़ूर

करने के इम्कानात हैं, उन्हीं हज़रत की थी ।"

निगार ने भौंचक्की होकर कहा, "तुम सच कह रही हो ?"

मैंने संजीदगी से कहा, "तुम यक़ीन जानो कि खुद मुझको अपनी निगाहों पर शक था कि मैं उनकी तसवीर देख रही हूँ या फ़रेबे-नज़र है । उसके बाद उनका खत देखकर मेरे ताज्जुब की कोई इन्तेहा न रही । मुझको सिर्फ़ ताज्जुब है, रंज या अफ़सोस नहीं । मैं खुद चाहती हूँ कि उनकी शादी हो जाये तो मैं उसको अपनी खुशनसीबी समझूँगी ।"

निगार ने सख्त गुस्से के तेवरों से कहा, "पागल हो गई हो । क्या मजाल जो तारा के साथ शादी हो सके । मैं आज ही जाकर तारा और उनकी वाल्दा से यह सब क़िस्सा सुनाती हूँ और फिर देखती हूँ कि कैसे वहाँ शादी होती है । तुम इसको अपनी खुशनसीबी समझो मगर याद रहे कि ऐसा सर पकड़ कर रोओगी कि रोया न जायेगा ।"

मैंने हँसकर कहा, "निगार ऐसा करना भी नहीं । तुमको नहीं मालूम कि मैं इस इन्तिखाब को मिन जानिब अल्लाह (ईश्वर की ओर से) एक बेहतरीन इन्तिखाब समझती हूँ कि उनकी निस्बत तारा के लिए गई है और वहाँ पसन्द की गई है ।"

"बहरहाल उनकी शादी तो कहीं-न-कहीं हो ही जायेगी । ताराके साथ न सही किसी और माहपारा के साथ सही, मगर मैं यह चाहती हूँ कि अगर हो रही है तो मेरी सहेली के साथ क्यों न हो ? मेरी जानी-बूझी, मेरी दोस्त और मेरी प्यारी तारा ही क्यों न मेरी सौत बने ।"

निगार ने तनफ़्फ़ुर के साथ गर्दन फेर कर कहा, "तुम कुछ हवास में हो या बिल्कुल बेहवास हो गई हो ? तारा से, मुझको मालूम है कि तुमको मुहब्बत है, और वह तुम पर फ़रेफ़्ता है । मगर सौत बनने के बाद क्या तुम दोनों ऐसी ही रहोगी जैसी आज हो ? तौबा करो । दूसरे यह कि अब बेवक़ूफ़ी छोड़कर अक्ल से काम लो और अपने साहब के इस अरमान की बिला वजह ठेकेदार न बनो । उन्होंने तुमको बेवक़ूफ़ बनाया है । वह तुमको धोखा दे रहे हैं तो तुम भी ज़रा उनकी खबर

लो और साफ़ कह दो कि तुमको सब खबर है जो कुछ वह तुमसे छुपा-कर कर रहे हैं।"

मैंने निगार के गले में बाँहें डालकर कहा, "प्यारी निगार, तुम्हारी इस मुहब्बत का मैं शुक्रिया अदा नहीं कर सकती। मगर तुम मुझको इस सिलसिले में मेरे हाल पर छोड़ दो। मैं खुद अपनी सौत लाना चाहती हूँ और तुमसे सिर्फ़ यह चाहती हूँ कि तुम मुझको तारा से बराबर मिलाती रहो। न उसके घर पर न मेरे घर पर ताकि मैं इस सिलसिले से बाखबर रहूँ······।"

अब जो मैं देखती हूँ तो निगार ज़ोरो-कतार रो रही है। मैंने फिर निगार को गले से लगाया और निहायत मुहब्बत से कहा :

"ऐ वाह री पगली तू तो रोने लगी।"

मेरा यह कहना था कि निगार की हिचकियाँ बँध गईं और वह कुछ इस तरह रोई कि मेरा दिल भर आया। मुख्तसर यह कि हम दोनों देर तक एक-दूसरे के सीने से लगे रोया किये। जब दोनों खूब रो चुके तो मैंने अपने और निगार के आँसू पोंछते हुए निगार से कहा :

"तुम बड़ी बेवक़ूफ़ हो निगार, और तुमसे बढ़कर मैं बेवक़ूफ़ हूँ कि तुम्हारे बिला वजह रोने पर मुझको भी रोना आ गया। बहन, यह रोने की बात तो जब थी कि मेरे साहब मेरी मर्ज़ी के खिलाफ़ मेरे सर पर सौत ला रहे होते। लेकिन ऐसी हालत में जबकि मैं खुद चाहती हूँ कि वह दूसरी शादी कर लें और यह तै कर चुकी हूँ कि उनकी दूसरी शादी कराऊँगी तो इसमें रोने की कौन सी बात है? तुम पढ़ी-लिखी समझदार औरत होकर मेरे इस फ़ेल को मेरी हिमाक़त समझती हो? तुमसे ताज्जुब है, हालाँकि मेरी तरफ़ से तो दुनिया की बीवियों के लिए एक मिसाल पेश की जा रही है और मैं दुनिया को दिखा दूंगी कि सौतिया डाह किस क़दर पस्त जज़्बा है और इसके मुक़ाबले में सौतिया चाह किस क़दर बुलन्द, किस क़दर फ़ैयाज़ाना (उदारतापूर्ण) और किस क़दर शरीफ़ाना जज़्बा है। मैं तुमसे सच कहती हूँ कि मैं तुमको आज

नहीं तो कल अमलन यह दिखा दूँगी कि मैं न सिर्फ़ अपनी सौत से खुश रहूँगी बल्कि उसको भी मजबूर करूँगी कि वह मुझसे खुश रहे और मुझे देख लेना कि हम दोनों सौतों के ताल्लुक़ात किस क़दर खुशगवार और किस क़दर ख़वाहिराना (बहन के-से) होते हैं। मेरी इस कोशिश में तुम मेरी सिर्फ़ इस क़दर मदद कर सकती हो कि तारा के यहाँ उनकी निस्बत जल्द-से-जल्द तै करा दो और तारा को कानों-कान खबर न होने दो कि वह मेरी सौत बन रही है।"

निगार ने कहा, "तुमको अपने फ़ेल का इख्तियार है, मगर मैं तो इसके लिए तैयार नहीं हूँ कि बेवक़ूफ़ बनने में मदद दूँ।"

मैंने फिर निगार को गले से लगा कर उसकी खुशामद शुरू कर दी, और यहाँ तक उसको मजबूर किया कि आखिर वह बादिले-नाख्वास्ता (अनमने से) इसके लिए तैयार हो गई कि तारा को अपने यहाँ बराबर बुलाती रहेगी और उससे मिलाती रहेगी। और यह तै हो जाने के बाद हम दोनों ने खाना खाया और फिर इस बहस पर कोई गुफ़्तगू नहीं की। यहाँ तक कि निगार की मोटर भी आ गई जिसके साथ उनके साहब का खत भी था कि अब क़ुसूर माफ़ कर दीजिये। लिहाज़ा मैंने निगार को गले लगाकर रुख्सत किया और उससे ताकीद कर दी कि जल्द तारा को बुलाये और मुझसे मिलाये।

५

निगार को मैंने अपने नज़दीक बिल्कुल राज़ी कर लिया था और मैं उसके जाने के बाद अपनी जगह पर मुतमइन थी कि वह ज़रूर इस सिलसिले में निहायत राज़दारी के साथ मेरी मदद करेगी। मगर इस अल्लाह की बन्दी ने तो जाने के बाद साँस न ली, न डकार, गोया

बिल्कुल चुप साधकर बैठ रही। आखिर ख़ुद मैंने ख़त-पर-ख़त और तक़ाज़े-पर-तक़ाज़ा शुरू किया तो यह हुआ ज़्यादा अर्से तक इस क़िस्से को न टाल सकी और मजबूरन एक दिन मोटर भेजकर मुझको बुला भेजा। मैं तो गोया इसकी मुंतज़िर ही थी, जैसे मोटर ड्राइवर ने पर्चा भिजवाया मैंने साहब से कहा कि निगार के यहाँ जाती हूँ। साहब ने कहा कि हम भी चलेंगे, हमको रास्ते में उतार देना। मैंने कहा कि मैं किराया ले लूंगी। चुनाँचे आठ आने पर क़िस्सा तै हुआ। मैंने फ़ौरन अठन्नी नक़द कर ली, उसके बाद साहब को मोटर पर क़दम रखने दिया। साहब थोड़ी दूर जाकर उतर पड़े और मैं सीधी निगार के यहाँ पहुँची। वहाँ देखती क्या हूँ कि ड्योढ़ी में निगार और तारा दोनों गोया मेरी ताक में खड़ी थीं। मुझको देखते ही तारा ने झपट कर दबोच लिया और लगी पागलों की तरह चीखने, "अरी मेरी रज़्ज़ो! अरी रज़िया की बच्ची।"

निगार ने कहा, "अरे रज़िया वह याद है तुमको जब हम लोग तुमको सताया करते थे कि रज़िया की बच्ची दाल तेरी कच्ची, आटा तेरा पतला तू खा गई बागड़ बिल्ला।"

तारा हँसी के मारे लोट गई और हँसते-हँसते बुरा हाल हो गया। ख़ुद मुझको भी निगार के इस याद दिलाने पर स्कूली ज़िन्दगी का यह सिड़ीपन याद करके बेसाख़्ता हँसी आ गई। मैंने कहा, "और वह जो हम लोग उस्तादनीजी कुलसूम बेगम से कहा करते थे कि उस्तादनी जी सलाम, आपके पैरों की ग़ुलाम। आपके सोने का तख़्त, हमारी छुट्टी का वक़्त।"

निगार ने हँसी से बेताब होकर अटक-अटक कर कहा, "इसमें वक़्त और तख़्त पर बड़ी तश्दीद भी तो होती थी—वक़्क़त और तख़्ख़त।"

तारा ने कहा, "वक़्त कब हम लोग कहते थे वख़्ख़त 'क़ाफ़' की जगह 'ख़े' होती थी।" यह कहकर उसने ख ख ख करके जो हँसना

शुरू किया तो हंसाते-हँसाते हम दोनों का बुरा हाल कर दिया। जहाँ हँसी रुकी, वह फिर वख़्वत कहकर ख ख़ शुरू कर दे और हम लोगों को हँसी का दौरा फिर शुरू हो जाये। देर तक इसी तरह पागलपन की हँसी हँसते रहे, आखिर मैंने कहा :

"तौबा है तारा बस करो। पेट में दर्द होने लगा।" तारा से यह कहकर मैंने जरा हँसी की कैफ़ियत को दूर करने के लिए चंद मिनट खामोश रहकर कहा, "क्यों निगार की बच्ची, दाल तेरी कच्ची यह तूने इतने दिनों के बाद मुझे क्यों बुलाया ?"

निगार के जवाब देने से पहले ही तारा बोल उठी, "भई इसकी ज़िम्मेदारी मुझ पर है। बात यह है कि पहले जब इन साहबज़ादी ने मुझको बुलवाया है तो उसी रोज़ वालिद साहब बम्बई जा रहे थे उसके बाद जब आपने बुलाया तो मैं ख़ुद मौजूद न थी आगरा चली गई थी।"

निगार ने कहा, "अब तो दिमाग़ में कोई ख़राबी नहीं है ?"

तारा— "जी हाँ, पहले भी आपकी सौदाई थी अब भी आपकी दीवानी मशहूर हूँ।"

मैंने कहा, "दीवानी के साथ कचहरी तो कहा करो।"

निगार ने कहा, "आप आगरा क्यों तशरीफ़ ले गई थीं ?"

तारा ने कहा, "वहाँ हमारे एक अज़ीज़ हैं, उनको देखने गये थे।"

निगार ने कहा, "वहाँ आपके कौन-से अज़ीज़ हैं ?"

तारा ने संजीदगी से कहा, "हैं एक अज़ीज़ शायद, तुम जानती हो जनाब ताजमहल साहब।"

निगार ने कहा, "चल दूर। सच बता क्यों गई थी आगरा ?"

तारा ने कहा, "वाक़ई, बस घूमने और ताजमहल देखने। कभी ताजमहल नहीं देखा था। अम्मी ने कहा कि वालिद साहब बम्बई की सैर कर रहे हैं, हम लोग आगरा घूम आयें।"

मैंने कहा, "हाँ साहब ख़ूब घूमती फिरो। और क्या लाईं हम

लोगों के लिए ?"

तारा ने कहा, "और क्या लाती ? ताजमहल ही लेती आई हूँ।"

निगार ने मुँह चिढ़ाकर कहा, "चुड़ैल कहीं की। ताजमहल क्या लाती, दो पैसे की भी कोई चीज़ न लाई बदतमीज़ तुझसे।"

तारा ने कहा, "मज़ाक़ नहीं, सचमुच ताजमहल लाई हूँ। किसीको भेजकर गाड़ी में से मँगवा लो।"

निगार ने कहा, 'अच्छा ख़ैर शुक्रिया आपका और आपके ताज-महल का। कैसा अब बात को टाल रही है।"

तारा ने ज़ोर देकर कहा, "हट बेवक़ूफ़, बेकार को टरटराये जाती है। यह नहीं होता कि किसी को भेजकर बाहर से मँगवाले।" यह कह कर तारा ने ख़ुद मुलाज़िमा को बुलाकर बाहर भेजा कि जाकर गाड़ी में से बण्डल उठा लाये। थोड़ी ही देर में मुलाज़िमा एक बण्डल लेकर आई। तारा ने बण्डल खोलते हुए कहा, "लो देखो यह ताज-महल है या नहीं ?"

उस बण्डल में दो निहायत ख़ूबसूरत सफ़ेद पत्थर के बने हुए छोटे-छोटे ताजमहल थे। एक उसने मुझको दिया और एक निगार को। उसके बाद एक दूसरा बण्डल खोलते हुये, जो उसी बण्डल में बँधा था, कहा, "ये इत्रदान हैं। बात यह है कि तुम दोनों ठहरी सुहागन, तुम्हारे लिये इत्रदान बड़ी ज़रूरी चीज़ है।"

ये इत्रदान निहायत ख़ूबसूरत और क़ीमती थे और उनमें इत्र की शीशियाँ भरी हुई थीं। निगार ने ताजमहल और इत्रदान हर तरफ़ से देखभाल कर एक तरफ़ रख दिया और निहायत अदब से खड़े होकर तारा को सलाम करते हुये कहा, "शुक्रिया आपकी इस ग़रीब-परवरी का। बेहूदा कहीं की कोई खाने की चीज़ नहीं लाई।"

मैंने कहा, "निगार तू अब तक चटोरी है क्या ?"

तारा ने कहा, "अरे तो क्या तुम यह समझती हो कि बाल-बच्चे हो जाने के बाद वह निगार बदल गई होगी, जो छुट्टी के वक़्त स्कूल

पढ़ती हैं और कमीनेपन की चोरियाँ करती हैं। चोट्टियाँ कहीं कीं।"

मैंने कहा, "उस्तानी जी, अपना खाना ला दूँ ?' नाच ही तो गईं यह सुनकर। और भुँझलाकर बोलीं, 'चल दूर !' उधर मिस फ़ात्मा मारे हँसी के मिस विलियम पर क़लाबाज़ी खा गईं। मुख़्तसर यह कि दिनभर चुड़ैल ने फ़ाक़ा किया और हम सबने मज़ा उड़ाया।"

तारा यह किस्सा बयान कर रही थी कि खाना आ गया। हम सबने दिलचस्प गुफ़्तगू के साथ हँस खेलकर खाना खाया और खाने से फ़ारिग़ होकर निगार तो अपना मुटापा लेकर मसहरी पर दराज़ होगईं और हम दोनों उनकी मसहरी के सामने सोफ़ों पर बैठ गये। थोड़ी देर तक स्कूल ही की बातें होती रहीं। आख़िरकार निगार ही ने तारा को छेड़कर कहा :

"अरी हाँ, कुछ तै-बै हुआ तेरी शादी-व्याह का क़िस्सा या जवाँ-जहाँ योंही बैठेगी हमेशा ?"

तारा ने चमक कर कहा, "क्यों तै क्यों न होता यह क़िस्सा ? क्या मैं ऐसी गई-गुजरी हूँ कि तुम लोगों की हो जाये और मैं बैठी ही रहूँ ? अलबत्ता तुम लोगों की तरह अपने माँ-बाप पर भारी नहीं हूँ जो औने-पौने किसी के हवाले कर दें।'

"अल्ला री बेशर्म, अल्ला री बेहया ! कैसी क़ैंची की ऐसी जुबान चलाती है। अच्छा तो हुआ क्या ? कहाँ हो रही है ? कुछ तुझे भी खबर है ?"

तारा ने कहा, "व्याह मेरा हो रहा है मुझे नहीं तो क्या तुझे खबर होगी ? उन्हीं लाट साहब के साथ तै हो रही है जिनके लिये मैंने तुझको बतलाया था और जिनकी तसवीर दिखाई थी।"

निगार ने कहा, "तो आख़िर कब तक होगी ?"

तारा—"ऐसी जल्दी पड़ी है मुझको निकालने की ? अब्बा तो ऐसी जल्दी नहीं, लेकिन अम्मीजान तो यह चाहती हैं कि मुझे आज ही निकाल बाहर करें। अभी कोई तारीख तो ठहरी न

चढ़ा गये।"

निगार ने कहा, "अरी तो क्या तू बराबर देखती रही उनको ?"

तारा ने बनकर कहा, "ऐ बहन क्या बताऊँ एक मर्तबा जो उन पर निगाह पड़ गई तो फिर किसी तरह हटाई न गई जब तक कि वह उठ कर चले नहीं गये।"

निगार ने कहा, "अल्लाह रे तेरे दीदे ! यह है कलयुग का खेल !'

तारा ने कहा, "आदाब अर्ज़ है ! मैं तो ऐसी ही बेग़ैरत हूँ। अच्छा अब खिलवाओ-पिलवाओ। फिर चलें जरा घूम आयें सब मिलकर कहीं।"

निगार ने उसके कहते ही चाय मँगवाई और हम सबने नाश्ता करने के बाद मोटर पर दरिया के किनारे का रुख किया। दरिया के किनारे जाकर थोड़ी देर तक उछल-कूद होती रही। उसके बाद सब अपने-अपने घर रवाना हो गये। एक ही मोटर पहले तारा के यहाँ, फिर मेरे यहाँ और आखिर में निगार के यहाँ हम लोगों को पहुँचाने के लिये काफ़ी हुई।

६

साहब की राज़दारियाँ बदस्तूर जारी थीं और उधर मैं पोस्तकन्दा (प्रगट) हालात से वाखबर थी और हर रोज़ की हर बात मुझको मालूम हो जाया करती थी। दिसम्बर का महीना क़रीब था और शादी गोया सर पर आगई थी। मगर अब तक साहब ने मुझको अपने नजदीक अपने इरादे की हवा भी न लगने दी थी। पहले तो खुद मैं इस कुरेद में रहती थी कि किसी तरह साहब मुझको इस सिलसिले में अपना हमराज़ बना लें और मैं उनका चोर पकड़ लूं, मगर अब

मुझमें यह तग़य्युर (परिवर्तन) हो गया था कि मैं खुद यह चाहती थी कि इस क़िस्म का कोई ज़िक्र न छिड़े तो अच्छा है। इसलिए कि अगर वह अब तक अपने राज़ को मुझसे छुपाये रहे हैं तो अब भी छुपायें और मैं उनसे इस राज़दारी का दिलचस्प इन्तिक़ाम ले सकूं। चुनांचे होता यह था कि अब कुछ दिनों से साहब खुद छेड़-छेड़कर इस क़िस्म की गुफ़्तगू शुरू करते थे और मैं दानिस्ता शरारत के साथ इस मुबहस (बहस की जगह या वक़्त) को टालने की कोशिश करती थी। चुनांचे एक दिन जब रात का खाना खाकर लेटे तो खुद ही कहा :

"हां रज़्जो, अब तुम अपनी सौत बुलाने का ज़िक्र नहीं करती हो।"

मैंने कहा, "आपको यह ज़िक्र नागवार होता है तो क्या फ़ायदा आपको तकलीफ़ पहुंचाने और परेशान करने से ? मैं आपको परेशान करने नहीं, बल्कि आपकी परेशानी दूर करने आपके यहां आई हूं।"

साहब ने कहा, "या यह वजह है कि सौत के भयानक तसव्वुर से अब तुम खुद डर गई हो और तुमको खयाल यह हो गया है कि कहीं मैं सचमुच तुम्हारे कहने में न आजाऊं और तुम महज़ अख़लाक़न कहती हो, मगर मैं कहीं सचमुच तुम्हारे सर पर सौत न ले आऊं।"

मैंने कहा, "भयानक तसव्वुर के क्या मानी ? मैं उन औरतों में नहीं हूं जो सौत को मौत समझती हैं। मैंने कभी आपसे अख़लाक़न कहा है बल्कि इसको मेरा खुदा जानता है कि यह मेरी दिली ख्वाहिश है कि आप दूसरी शादी कर लायें और साहबे-औलाद हो जायें।"

साहब ने कहा, "अच्छा-अच्छा क़स्में न खाइये। मुझको आपके बयान का यक़ीन है। हलफ़नामा दाखिल करने की ज़रूरत नहीं, मगर आप हैं वाक़ई इन्तिहाई चुग़द और अगर···आप वाक़ई दूसरी शादी कराना चाहती हैं तो मैं आपको दाद दिये बग़ैर नहीं रह सकता कि आप वाक़ई निहायत मज़बूत क़िस्म की औरत हैं। वर्ना एक औरत और खुद अपने लिए सौत का इन्तिज़ाम करे ? तौबा कीजियेगा।"

निगार ने कहा, "अरी तो ... र देखती रही उनको ?"

तारा ने बनकर कहा, "ऐ ... ऊँ एक मर्तबा जो उन पर निगाह पड़ गई तो फिर किस ... न गई जब तक कि वह उठ कर चले नहीं गये।"

निगार ने कहा, "अल्लाह रे ... है कलयुग का खेल !"

तारा ने कहा, "आदाब अर्ज़ ... ही वेग़ैरत हूँ। अच्छा अब खिलवाओ-पिलवाओ। फिर चलें ज... सब मिलकर कहीं।"

निगार ने उसके कहते ही चाय मँगवाई और हम सबने नाश्ता करने के बाद मोटर पर दरिया के किनारे का रुख किया। दरिया के किनारे जाकर थोड़ी देर तक उछल-कूद होती रही। उसके बाद सब अपने-अपने घर रवाना हो गये। एक ही मोटर पहले तारा के यहाँ, फिर मेरे यहाँ और आखिर में निगार के यहाँ हम लोगों को पहुँचाने के लिये काफ़ी हुई।

६

साहब की राज़दारियाँ बदस्तूर जारी थीं और उधर मैं पोस्तकन्दा (प्रगट) हालात से बाख़बर थी और हर रोज़ की हर बात मुझको मालूम हो जाया करती थी। दिसम्बर का महीना क़रीब था और शादी गोया सर पर आगई थी। मगर अब तक साहब ने मुझको अपने नज़दीक अपने इरादे की हवा भी न लगने दी थी। पहले तो खुद मैं इस कुरेद में रहती थी कि किसी तरह साहब मुझको इस सिलसिले में अपना हमराज़ बना लें और मैं उनका चोर पकड़ लूं, मगर अब

मुझमें यह तग़य्युर (परिवर्तन) हो गया था कि मैं खुद यह चाहती थी कि इस क़िस्म का कोई ज़िक्र न छिड़े तो अच्छा है। इसलिए कि अगर वह अब तक अपने राज़ को मुझसे छुपाये रहे हैं तो अब भी छुपाये और मैं उनसे इस राज़दारी का दिलचस्प इन्तिक़ाम ले सकूं। चुनांचे होता यह था कि अब कुछ दिनों से साहब खुद छेड़-छेड़कर इस क़िस्म की गुफ़्तगू शुरू करते थे और मैं दानिस्ता शरारत के साथ इस मुबहस (बहस की जगह या वक़्त) को टालने की कोशिश करती थी। चुनांचे एक दिन जब रात का खाना खाकर लेटे तो खुद ही कहा :

"हाँ रज़्जो, अब तुम अपनी सौत बुलाने का ज़िक्र नहीं करती हो।"

मैंने कहा, "आपको यह ज़िक्र नागवार होता है तो क्या फ़ायदा आपको तकलीफ़ पहुँचाने और परेशान करने से ? मैं आपको परेशान करने नहीं, बल्कि आपकी परेशानी दूर करने आपके यहाँ आई हूँ।"

साहब ने कहा, "या यह वजह है कि सौत के भयानक तसव्वुर से अब तुम खुद डर गई हो और तुमको ख़याल यह हो गया है कि कहीं मैं सचमुच तुम्हारे कहने में न आजाऊँ और तुम महज़ अख़लाक़न कहती हो, मगर मैं कहीं सचमुच तुम्हारे सर पर सौत न ले आऊँ।"

मैंने कहा, "भयानक तसव्वुर के क्या मानी ? मैं उन औरतों में नहीं हूँ जो सौत को मौत समझती हैं। मैंने कभी आपसे अख़लाक़न कहा है बल्कि इसको मेरा खुदा जानता है कि यह मेरी दिली ख़्वाहिश है कि आप दूसरी शादी कर लायें और साहबे-औलाद हो जायें।"

साहब ने कहा, "अच्छा-अच्छा क़स्में न खाइये। मुझको आपके बयान का यक़ीन है। हलफ़नामा दाख़िल करने की ज़रूरत नहीं, मगर आप हैं वाक़ई इन्तिहाई चुग़द और अगर...आप वाक़ई दूसरी शादी कराना चाहती हैं तो मैं आपको दाद दिये बग़ैर नहीं रह सकता कि आप वाक़ई निहायत मज़बूत क़िस्म की औरत हैं। वर्ना एक औरत और खुद अपने लिए सौत का इन्तिज़ाम करे ? तौबा

चढ़ा गये।"

निगार ने कहा, "अरी तो व ... र देखती रही उनको?"

तारा ने बनकर कहा, "ऐ व ... ाऊँ एक मर्तबा जो उन पर निगाह पड़ गई तो फिर किसी ... गई जब तक कि वह उठ कर चले नहीं गये।"

निगार ने कहा, "अल्लाह रे ... है कलयुग का खेल!"

तारा ने कहा, "आदाब अर्ज़ है ... बेग़ैरत हूँ। अच्छा अब खिलवाओ-पिलवाओ। फिर चलें जरा ... व मिलकर कहीं।"

निगार ने उसके कहते ही चाय मँगवाई और हम सबने नाश्ता करने के बाद मोटर पर दरिया के किनारे का रुख किया। दरिया के किनारे जाकर थोड़ी देर तक उछल-कूद होती रही। उसके बाद सब अपने-अपने घर रवाना हो गये। एक ही मोटर पहले तारा के यहाँ, फिर मेरे यहाँ और आखिर में निगार के यहाँ हम लोगों को पहुँचाने के लिये काफ़ी हुई।

६

साहब की राज़दारियाँ बदस्तूर जारी थीं और उधर मैं पोस्तकन्दा (प्रगट) हालात से बाखबर थी और हर रोज़ की हर बात मुझको मालूम हो जाया करती थी। दिसम्बर का महीना क़रीब था और शादी गोया सर पर आगई थी। मगर अब तक साहब ने मुझको अपने नजदीक अपने इरादे की हवा भी न लगने दी थी। पहले तो खुद मैं इस कुरेद में रहती थी कि किसी तरह साहब मुझको इस सिलसिले में अपना हमराज़ बना लें और मैं उनका चोर पकड़ लूं, मगर अब

मुझमें यह तग़य्युर (परिवर्तन) हो गया था कि मैं खुद यह चाहती थी कि इस क़िस्म का कोई ज़िक्र न छिड़े तो अच्छा है। इसलिए कि अगर वह अब तक अपने राज़ को मुझसे छुपाये रहे हैं तो अब भी छुपायें और मैं उनसे इस राज़दारी का दिलचस्प इन्तिक़ाम ले सकूं। चुनांचे होता यह था कि अब कुछ दिनों से साहब ख़ुद छेड़-छेड़कर इस क़िस्म की गुफ़्तगू शुरू करते थे और मैं दानिस्ता शरारत के साथ इस मुबहस (बहस की जगह या वक़्त) को टालने की कोशिश करती थी। चुनांचे एक दिन जब रात का खाना खाकर लेटे तो ख़ुद ही कहा :

"हाँ रज़्जो, अब तुम अपनी सौत बुलाने का ज़िक्र नहीं करती हो।"

मैंने कहा, "आपको यह ज़िक्र नागवार होता है तो क्या फ़ायदा आपको तकलीफ़ पहुँचाने और परेशान करने से ? मैं आपको परेशान करने नहीं, बल्कि आपकी परेशानी दूर करने आपके यहाँ आई हूँ।"

साहब ने कहा, "या यह वजह है कि सौत के भयानक तसव्वुर से अब तुम खुद डर गई हो और तुमको खयाल यह हो गया है कि कहीं मैं सचमुच तुम्हारे कहने में न आजाऊँ और तुम महज़ अख़लाक़न कहती हो, मगर मैं कहीं सचमुच तुम्हारे सर पर सौत न ले आऊँ।"

मैंने कहा, "भयानक तसव्वुर के क्या मानी ? मैं उन औरतों में नहीं हूँ जो सौत को मौत समझती हैं। मैंने कभी आपसे अख़लाक़न कहा है बल्कि इसको मेरा खुदा जानता है कि यह मेरी दिली ख़्वाहिश है कि आप दूसरी शादी कर लायें और साहबे-औलाद हो जायें।"

साहब ने कहा, "अच्छा-अच्छा क़स्में न खाइये। मुझको आपके बयान का यक़ीन है। हलफ़नामा दाखिल करने की ज़रूरत नहीं, मगर आप हैं वाक़ई इन्तिहाई चुग़द और अगर···आप वाक़ई दूसरी शादी कराना चाहती हैं तो मैं आपको दाद दिये बग़ैर नहीं रह सकता कि आप वाक़ई निहायत मज़बूत क़िस्म की औरत हैं। वर्ना एक औरत और खुद अपने लिए सौत का इन्तिज़ाम करे ? तौबा कीजियेगा

मैं साहब की चालाकी समझ गई थी कि अब चूंकि शादी का जमाना क़रीब था, लिहाज़ा उन्होंने बजाय इसके कि इस मुबहस से हस्बे-मामूल रस्सियाँ तुड़ाते और उलझते, यह तरकीब शुरू कर दी थी कि मुझको दाद दे रहे थे गोया अब वह इसका इमकान पैदा कर रहे थे कि मैं उनके इस रवैये से फ़ायदा उठाकर फिर इसरार शुरू कर दूं और वह 'मुफ़्त करम दाश्तन' (मुफ़्त में कृपा करना) के उसूल पर चलकर मुझको ज़ेरबारे-एहसान (आभारी) करते हुए अपने लिए नहीं, बल्कि मेरे लिए और मेरा कहना पूरा करने के लिए अपनी शादी तो कर लें। मगर अब मैं तै कर चुकी थी कि अब यह ज़िक्र ही न छेड़ूंगी। लिहाज़ा उनकी इस चालाकी को समझते हुए मैंने दानिस्ता शरारत से कहा :

"आप राज़ी न हुए, वर्ना मैं बताती कि मेरा यह क़ौल मेरे फ़ेल का आईनादार होता और मैं जो कुछ कह रही थी वह कर दिखाती। बहरहाल अब इस ज़िक्र को छोड़िये। अब उसकी कौन-सी तुक है ?"

साहब ने चालाकी से हंसकर कहा, "अच्छा तो यह कहिये कि आप मेरी तरफ़ से इस मामले में बिलकुल मायूस हो चुकी हैं और मेरा मर्ज़ आपने नाक़ाबिले-इलाज समझ लिया है।"

मैंने लापरवाही से कहा, "हाँ शायद उसको आपने महज़ अख़लाक़ समझा। बहरहाल अब जबकि आपको राज़ी करने की हर कोशिश में मुझको नाकामी हो चुकी है तो आप मेरी नाकामियों को मुझे क्यों याद दिला रहे हैं और क्यों उस भूले हुए अफ़साने को छेड़ रहे हैं ?"

साहब ने कहा, "तो क्या तुम उस सिलसिले में मुझसे ख़फ़ा हो ?"

देखा आपने ? साहब मुझसे कहलवाना चाहते थे कि मैं उनसे उस सिलसिले में ख़फ़ा हूं। अगर मैं यह कह देती तो वह मुझको खुश करने के लिए आज ही बल्कि इसी वक़्त आमादगी ज़ाहिर कर देते, बल्कि वह सब कुछ मेरे इल्म के बग़ैर खुद ही तै कर चुके थे और इस वक़्त मुझको महज़ बेवक़ूफ़ बना रहे थे। मगर अब मेरा इरादा ही

कुछ और था। लिहाज़ा मैंने भी इस चालाकी और शरारत का जवाब चालाकी और शरारत से देते हुए कहा :

"नहीं, मैं बिल्कुल खफ़ा नहीं हूँ, बल्कि आपकी इस मुहब्बत पर मुझको फ़ख्र है कि बावजूद मेरे इन्तिहाई इसरार के महज़ मेरी मुहब्बत की वजह में आप अपनी दूसरी शादी पर आमादा नहीं हुए। मैं जिस वक़्त आपके इस तर्ज़-अमल पर ग़ौर करती हूँ और दुनिया के उन मर्दों को देखती हूँ जो अपनी बीवियों से छुपाछुपाकर और यह जानते हुए कि उससे बीवी को सख्त अज़ीयत (त्रास)और ज़िन्दगी भर की कोफ़्त होगी, दूसरी शादी करते हैं या ऐयाशी करते हैं तो मैं आप से सच कहती हूँ कि मैं फूली नहीं समाती। आप मुझसे छुपाकर ऐसी बात क्या करेंगे जबकि मेरे इसरार के बावजूद आप उस तरफ़ रुजू न हुए और आपने मेरे जज़्बात का ऐसा ख़याल किया कि मैं तो इस ज़िन्दगी में आपके इस ईसार का बदला दे नहीं सकती।"

मैं देख रही थी कि मेरे इन अलफ़ाज़ पर साहब का एक रंग आ रहा था और एक जा रहा था। मालूम यह होता था कि हाथों के तोते उड़ गये और पैर के नीचे की ज़मीन निकल गई। मगर अल्ला रे, उसकी मर्दाना चालाकी कि बावजूद इस गिरिफ़्त के वह अपने को क़ाबू में न आने देते थे। फ़ौरन अपने को संभालकर बोले :

"मेरे ख़याल में जो मर्द इस ख़याल से कि उसकी बीवी को तकलीफ़ न हो, अपनी ख्वाहिश की तकमील चुरा-छिपाकर कर लेते हैं, उनके मुताल्लिक़ यह समझ लेना चाहिये कि वह भी बहरहाल अपनी बीवी का कुछ-न-कुछ ख़याल तो करते हैं और उन लोगों से बहरहाल अपनी बीवी को दिखा-दिखा कर उसके सर पर सब कुछ करते हैं और उसकी छाती पर मूंग दलते हैं। मैं तो इसको ज़ुल्म समझता हूँ।"

देखा आपने ? मेरे ज़हीन साहब ने अपने तमाम तर्ज़-अमल के लिए [illegible]-सी कैसा जवाब ढूंढ़ा है। मुझको उनके इस उज़्रे-गुना[illegible]

आ रही थी मगर मैंने बजाय हँसने के हँसी

"चोर हैं वह मर्द ज़ो वीवी से छुपाकर वीवी से सख्त खयानत करते हैं। मैं उनको किसी हैसियत से क़ाविले माफ़ी नहीं समझती। अगर वह विला वजह अपनी वीवी को उसके हक़ से महरूम करते हैं और उसका शरीक किसी और को वनाते हैं तो वह इन्सानियत सोज़-ज़ुल्म करते हैं और अगर किसी माक़ूल वजह के तहत वह इसके लिए मजवूर होते हैं तो उनको चाहिये कि अपनी वीवी को क़ायल वनाकर, उनको आगाह करके वल्कि उसकी रज़ा लेकर दूसरी शादी करें और उसको लाइल्म रखकर वेवक़ूफ़ वनाने के शर्मनाक जुर्म के मुर्तकिब (अपराधी) न हों वर्ना मैं तो विला वजह एक से ज़्यादा शादी करने वाले मर्दों को वुलहवस (कामुक) सियहकार और वदमाश समझती हूँ और उनकी वीवियों को मज़लूम।"

मैं उस वक़्त वाक़ई सख्त ग़ज़वनाक हो गई थी और खुदाजाने जोश में क्या कह गई। आखिर साहव ने खुद ही मुझको रोककर कहा, "ज़रा ग़ौर तो करो कि यह तुम क्या कह रही हो? तुम अपने जोश में इस्लामी क़ानून और एहकामे-खुदावन्दी पर एतराज़ कर रही हो। कैसी चार शादियों...तक की इजाज़त दी है। यानी वयकवक़्त एक मुसलमान चार शादियां कर सकता है और इजाज़त के साथ ज़रूरत या वजह की कोई क़ैद नहीं।"

साहव ने अपने लिए शरई आड़ भी तलाश कर ली, मगर मैं उस वक़्त वाक़ई जोश में थी। मैंने कहा, "वेशक मुझको एहकामे-महम्मदी का एहतराम है और शर-ए-इस्लाम के आगे सरे-तसलीम खम करने को मैं अपना ईमान जानती हूँ। मगर आप यह भी तो ग़ौर कीजिये कि इस्लाम ने इस इजाज़त के साथ कहीं पर यह इजाज़त नहीं दी कि एक वीवी से छुपाकर और चोरों की तरह चालाकी और ऐयारी से शादी की जाये। वल्कि इस्लामी क़ानून रोज़े-रोशन की तरह सब पर अयाँ है। मगर मर्द इससे वाखवर है वह चार शादियाँ कर सकता है तो औरत को भी इसका इल्म है कि उसकी वयक वक़्त तीन सौतने आ

सकती हैं फिर चोरी किस बात की है ? पर्दा किससे ? क्यों न औरत को ऐसा बनाया जाये कि वह ख़ुद सौत लाने की ताईद करे और शौहर को इसकी इजाज़त दे दे कि वह शौक़ से अपना एक और घर बसाये। इस तरह चोरी से शादी करने के मानी बीवी के जज़बात का पास करना नहीं बल्कि यह है कि बीवी और मियाँ के ताल्लुक़ात अच्छे नहीं हैं। मियाँ अपनी बीवी को समझाने और दूसरी शादी की माज़ूरियत (विवशता) और जरूरत को वाज़े करने से क़ासिर है और वह इस मुजरिमाना पर्देदारी के साथ शादी कर रहा है··· ।"

साहब ने बात काटकर कहा, "अच्छा फ़र्ज़ कर लीजिये कि एक शौहर अपनी बीवी से भी ताल्लुक़ात ख़ुशगवार रखना चाहता है और उसको दूसरी शादी भी करना है और वह यह भी जानता है कि अगर उसने अपनी शादी को राज़ न रखा तो ताल्लुक़ात नाख़ुशगवार हो जायेंगे। ऐसी सूरत में उसको क्या करना चाहिए ?"

मैंने इस सवाल के हर पहलू पर ग़ौर करके कहा, "उसको क्या चाहिये ? उसको चाहिये कि वह बीबी से ख़ुशगवार ताल्लुक़ात को वुसअत दे और उसके बाद उसको रफ़्ता-रफ़्ता इस बात पर आमादा करले कि बीवी ख़ुद उसको इजाज़त दे दे··· ।"

साहब ने पूरी बात सुने बग़ैर कहा, "लेकिन फ़र्ज़ कर लीजिए कि किसीकी बीवी ऐसी उल्टी खोपड़ी की वाक़े हुई है तो... ?"

मैंने कहा, "आप तो मुस्तसनियात (अपवाद) से बहस करने लगे··· ।"

साहब से ये बातें हो रही थीं कि मुलाज़िमा ने आकर कहा, "सरकार, वह साड़ी वाला आया है जिसको दो साड़ियाँ बनाने का हुक्म दिया था।"

मैंने कहा, "यह रात को उनके तशरीफ़ लाने का कौन-सा है ?"

साहब ने कहा, "दिन भर वह ग़रीब दूकान पर रहता

वक़्त दूकान बन्द करके घर जा रहा होगा कि आपके हुज़ूर में हाज़िर हुआ है।"

मैंने मुलाज़िमा से कहा, "अच्छा जाओ अगर साड़ियाँ लाया हो तो ले आओ।"

मुलाज़िमा यह सुनते ही वापस चली गई और थोड़ी ही देर में दो डिब्बे लिए हुए आई। एक डिब्बा साहब ने लपक कर ले लिया और एक मैंने। साहब ने खोलते ही कहा, "अहा हाहा! यह तो बड़ी फ़ौक़ुल भड़क बनवाई है साड़ी! इसका काम भी लाजवाब है और जार्जट भी दो हज़ार मोमी का मालूम होता है।"

मैं इस दो हज़ार मोमी की जार्जट पर हँस पड़ी। साहब ने मेरे हाथ वाले बक्स को झपटकर लेते हुए कहा, "अरे यह भी वैसी ही है। एक ही क़िस्म, एक ही काम और एक ही रंग की। दो क्या होंगी दूसरी किसी और रंग की बनवाई होती।"

मैंने कहा, "देखिये साहब, मैं आपके दफ़्तर के मामलात में कभी दख़ल नहीं देती और न कोई जवाब तलब करती हूँ। आपका जी जो चाहे वहाँ करते हैं, फिर आप भी मेरे इन मामलात में क्यों बोल रहे हैं?"

साहब ने बनाने के लिए हाथ जोड़कर कहा, "अच्छा सरकार माफ़ कीजिए। मगर जान की अमाँ पाऊँ तो अर्ज़ करूँ, खुदा के लिए इस मुअम्मे को सुलझा दीजिये कि ये दोनों एक ही क़िस्म की क्यों हैं?"

मैंने साहब से कहा, "फिर वही!" और मुलाज़िमा से कहा कि अच्छा साड़ीवाले से कह दो कि कुल हिसाब बनाकर लाये और आसमानी जार्जट भी लाये, उसकी भी दो बनेंगी।

साहब इस दो के पहाड़े को देर तक समझने की कोशिश करते रहे और आखिर सो गये, मगर मैंने कुछ न बताया।

था और एक नई मुलाज़िमा मैंने रख ली थी। इन सामानों के अलावा नौशावा की मार्फ़त तारा के यहाँ के तमाम हालात मालूम होते रहते थे कि आज वहाँ क्या हो रहा है और कल क्या हो रहा है। आजकल मैं तारा के यहाँ के हालात मालूम करने के लिए निगार से जल्द-जल्द मिलती थी। किसी दिन उसको बुलवा लिया, किसी दिन खुद उसके यहाँ चली गई। चुनांचे शादी से चन्द रोज़ क़ब्ल जो मैंने नौशावा को बुलवाया तो उसने मुझको लिख भेजा कि तुम खुद चली आओ, तुम्हारा ही आना ज़रूरी है। मैं यह पैग़ाम पाते ही निगार के यहाँ जा पहुँची। वहाँ पहुँच कर देखती क्या हूँ कि मेरे साहब की होने वाली दुल्हन निगार के हार्मोनियम पर बेतुकी गतें बजा रही है। मुझको देखते ही निगार एक तरफ़ से और तारा हार्मोनियम को छोड़ कर दूसरी तरफ़ से लपकीं और मेरे क़रीब पहुँच कर दोनों आपस में इस ज़ोर से टकराईं कि तारा को छटी का दूध याद आ गया होगा कि किस पहाड़ से टकराई है जबकि खुद निगार का यह हाल था कि उफ़्फ़ोह कह कर कलेजा पकड़ कर रह गईं। मैंने हँसते हुए कहा :

"तुम दोनों का बचपन अभी तक नहीं गया।"

तारा ने अपना सीना सहलाते हुए कहा, "तुम हो ही ऐसी चीज़ कि तुम्हारे लिए लोग लड़ मरें, जान दे दें और जो कुछ भी न करें थोड़ा है।"

मैंने कहा, "ऐ दुल्हन बी, अब तुम्हारी शादी क़रीब है। अब तो अपनी इस बारह हाथ की ज़ुबनिया को क़ाबू में रखो।"

तारा ने चमककर कहा, "वाह अच्छी कही। ज़ुबान क़ाबू में रखूंगी तो उस बेचारी में ज़ंग लग जायेगा। फिर अपने मियाँ को किस ज़ुबान से बातें सुनाऊंगी ?"

निगार ने एक दुहत्तर मारकर कहा, "अरी कमबख़्त, मियाँ-मियाँ बके जाती है, अब कुछ दिन तो शर्म कर ले।"

मैंने कहा, "यह घूंघट में भी अपनी हरकतों से बाज़ न आयेगी।"

निगार ने कहा, "ख़ुदा करे शादी के बाद भी यह ऐसी ही ख़ुश रहे जैसी कि अब है।"

मैंने कहा, "ख़ुश क्यों न रहेगी, अलबत्ता हम लोगों को न पूछेगी।'

तारा पहले तो एकदम से चुप हो गई और उसके बाद लगी आँसू बहाने चुपके-चुपके। मैंने और निगार दोनों ने वयक वक़्त उसको रोते हुए देखकर कहा :

"अरे यह क्या रोने क्यों लगी तू ?"

यह कहना था कि तारा और ज़ोर से रोने लगी और झुककर मेरे कंधे पर उसने सर रख दिया। मैं कमबख़्त यह समझी कि हो न हो, नौशाबा ने उससे सब कह दिया है ; वर्ना उसका रोना और रो-रोकर मेरे कन्धे पर सर रख देना क्या मानी रखता है। मैंने बहरहाल उसको तो गले से लगा लिया और आँख के इशारे से नौशाबा से पूछा कि यह क्या मामला है ?"

नौशाबा ने आवाज़ से कहा, "मुझसे क्या पूछती हो ? जहाँ मैं वहाँ तुम। मुझे क्या मालूम क्या बात है ?"

मैंने तारा को भींच-भींच कर पहले तो चिमटाया, फिर उसको बहुत तसल्ली और तशफ़्फ़ी देकर मैं और नौशाबा ने पूछा तो बमुश्किल तमाम उनके जवाब से हम लोग यह नतीजा निकाल सके कि शादी के बाद ख़ुश रहने और लोगों को न पूछने के मुताल्लिक नौशाबा ने और मैंने जो कुछ कहा था उससे उसको अपने होने वाले इन्क़लाब…का एहसास कुछ इस तरह हुआ कि वह रो दी।

निगार ने यह सुनते ही कहा, "गधी कहीं की। मैं तो समझी थी कि तू 'चे ग़म' किस्म की औरतों में है, मगर निकली तू भी चुगद।"

मैंने कहा, "हो बड़ी बेवक़ूफ़ तारा तुम। क्या तुमसे जो यह कहा गया कि तुम हम लोगों को पूछोगी भी नहीं। इसको तुम सच समझ बैठीं। मजाल है तुम्हारी कि तुम हम लोगों को न पूछो। तुमको और तुम्हारे…।"

निगार ने कहा, "हाँय-हाँय रज़िया क्या बकती चली जाती है ?"

मैंने भी सोचा कि वाक़ई मैं तो इस तरह कह रही थी कि गोया तारा के मियाँ मेरे कोई हैं ही नहीं। तारा ने इस नुक़्ते को समझने की कोशिश भी न की और फिर अपने चेहरे पर शगुफ़्तगी पैदा करके बोली :

"देखो जी, मुझको चाहे जो कुछ कह लो, मगर मेरे उनको कुछ न कहना।"

निगार ने कहा, "फिर वही बेग़ैरती की बातें ?"

मैंने कहा, "तारा क्या वाक़ई तू अभी से अपने दूल्हा को चाहने लगी है।"

तारा ने कहा, "और नहीं तो क्या तुम लोगों की तरह कि अब तक अपने दूल्हाओं को नहीं चाहती हो, बदतमीज़ो।"

निगार ने कहा, "और भी कुछ मालूम है रज़्ज़ो कि आज इन बेचारी का कुँवारपने का आखिरी आना है। यहाँ से उसके बाद अब इन्शाअल्लाह शादी-शुदा आयेंगी। इसलिये कि परसों ही से यह माँझे में बैठ जायेंगी।"

मैंने कहा, "क्योंरी तारा की बच्ची यह बात है ?"

तारा ने चमककर कहा, "जी और क्या ? क्या आप मुझको कुछ ऐसी-वैसी समझे हुए थीं ?"

नौशाबा ने कहा, "और अभी तक हम लोगों का बुलावा भी माँझे के लिए नहीं आया है।"

तारा ने कहा, "मरी क्यों जाती हो ? आज ही सुबह अम्मीजान ने बहुत से ख़त लिखवाये हैं। तुम्हारा और इन रज़्ज़ो बेगम सल्लमहा का ख़त एक ही लिफ़ाफ़े में बन्द है जो तुम्हारे पास आज ही कल में आ जायेगा। अगर तुम लोग न बुलाई जातीं तो मैं शादी से इन्कार कर देती कि नामंज़ूर।"

मैंने कहा, "आप नामंज़ूर करतीं मियाँ की निस्बत का ख़त और

तसवीर देखकर तो लट्टू हो गई थीं। चली वहाँ से नामंज़ूर करने वाली।"

निगार ने कहा, "अरे बकती है चुड़ैल! यह और नामंज़ूर करती? मैं तो समझ रही थी कि अगर इनकी वालदा ने शादी नामंज़ूर कर दी तो यह नकटी खुद निकाह पढ़वा लेगी चुपके से।"

तारा ने कहा, "हाँ बहन मेरा इरादा तो यही था कि बिल्कुल तुम्हारी तक़लीद करूं।"

मैं इस बर्ज़दस्ती पर हँस दी और निगार के एक घूंसा मारकर कहा, "बदतमीज़ कहीं की। तो क्या मैंने खुद निकाह पढ़ाया है?"

तारा—"तुम ही तो कहती थीं कि निकाह हो चुका है। मुझे क्या मालूम कि बग़ैर निकाह के अब तक हो। खैर यह बात है तो किसी से न कहना।"

मैं हंसी के मारे लोटी जा रही थी और निगार उस वक़्त बहुत बेवक़ूफ़ बन रही थी। मैंने कहा, "तारा तेरी बर्जस्तग़ी तो तेरे दूल्हा को भी लाजवाब कर दिया करेगी।"

तारा ने सलाम करते हुए कहा, 'जल्दी में इतनी ही बर्जस्तगी हो सकी है। इत्मिनान से बर्जस्तगी बनाती तो आप देखती कि क्या चीज़ होती।"

मैं कुछ कहने वाली थी कि निगार की मुलाज़िमा एक लिफ़ाफ़ा लिये हुए आ पहुँची और उसको निगार के हाथ में देकर तारा की तरफ़ इशारा करते हुए कहा, "आपके यहाँ से आया।"

निगार ने लिफ़ाफ़ा खोलकर पढ़ा उसमें दो ख़त एक ही मज़मून के थे—एक निगार के नाम दूसरा मेरे नाम। ये मांझे के बुलावे के ख़त थे। मैंने ख़त रखते हुए कहा, "अरे हाँ तारा यह तो बताओ कि तुम्हारे यहाँ क्या सामान हो रहे हैं?"

तारा ने मुंह बनाकर कहा, "क्या अर्ज़ करूँ,, सब अपने कहे के हैं। मुझसे पूछकर कोई काम नहीं हो रहा है। अपनी मर्ज़ी से जो जिसका

दिल चाहता है, कर रहा है। अलबत्ता मैंने वालिद साहब को एक सूट का कपड़ा लाते हुए देखा था। ग़ालिबन वह मेरे अंग्रेज़ बहादुर के लिए होगा।"

मैंने कहा, "तो क्या तेरी शादी किसी गोरे टामी के साथ हो रही है।"

तारा ने ख़ास अंदाज़ से कहा, "नो, नो, नो यू फूल ! वह एक फ़ैशनेबल जैण्टलमैन है, सूट पहनता है, मेज़ पर छुरी-कांटे से खाता है, कुत्ता पालता है।"

निगार ने कहा, " अब कुतिया का शौक़ हुआ है।"

तारा ने कहा, "नान्सेंस फ़ेलो। हमारा साहब बड़ा अपटूडेट है।"

मैंने कहा, "तारा तुझको भी वह मेम बनाकर रखेंगे।"

तारा ने हँसकर कहा, "ओह यस। मगर ना बाबा मैं बाल-बाल नहीं कटाऊँगी।"

निगार ने चाय मंगाने का हुक्म देते हुए कहा, "अच्छा तारा आज, बहुत दिनों के बाद कुछ सुना दो हार्मोनियम पर। फिर तो पियानो बजाया करोगी।"

तारा ने हारमोनियम घसीट कर निहायत मीठे सुरों में 'हाफ़िज़" की ग़ज़ल छेड़ दी।

मन पाक बाज इश्क़म जौक़े-फ़ना चशीदा
आहूए-दश्ते-हू यम अज़मा सिवा रमीदा।"

(मेरा प्रेम पवित्र है और मैं विनाश के रस का आस्वादन कर चुका हूँ। मैं बीहड़ वन के उस हिरन की भाँति हूँ जो इहिलोक एवं परलोक सभी से भागा हुआ है।)

और इस मज़े में ज़ालिम ने गाई है कि निगार और मैं महव होकर रह गये। ग़ज़ल के खत्म होते ही चाय आ गई। हम सबने चाय पी और फिर यही तै पाया कि इसी वक़्त सब लोग मोटर पर दरिया के किनारे चलें। फिर ज़रा कार्निवल घूमा जाये और उसके बाद अपने-

अपने घरों को रवाना हो जायें। चुनांचे इसी प्रोग्राम पर अमल किया गया। पहले दरिया के किनारे गये। वहाँ मोटर से उतर कर बिल्कुल लबे-दरिया तक गये, पानी से थोड़ी देर खेलते रहे। वहाँ से जब अंधेरा हो गया तो कार्निवल गये। एक घण्टा वहाँ सर्फ़ किया, आखिर में तारा को उसके मकान पर छोड़कर जब चले तो रास्ते में निगार ने कहा :

"रज़्ज़ो मैं अपने दिल से मजबूर हूँ। मुझसे उस तक़रीब में शरीक न हुआ जायेगा।"

मैंने कहा, "आप हैं पागल। मैं आपको ज़बरदस्ती ले चलूंगी। अभी तुमको मालूम ही नहीं है कि मैंने भी तो यह प्रोग्राम बनाया है कि ऐन शादी के दिन साहब को मालूम हो जाये कि मैं इस राज़ से वाक़िफ़ हूँ।"

निगार ने कहा, "नहीं, नहीं, ऐसा हरगिज़ न करना। उनसे तो तुम इसी तरह बेखबर रहो, गोया तुम कुछ जानती ही नहीं हो! वर्ना तमाम खेल बिगड़ जायेगा।"

मैंने थोड़ी देर तक ग़ौर करने के बाद कहा, "हाँ तुम ठीक कहती हो मगर माँझे और शादी में चलेंगे ज़रूर।"

नौशाबा ने कहा, "जैसा तुम कहो।"

निगार का मकान आ चुका था, उसको मैं वहाँ छोड़ कर घर पहुँची। साहब मेरे इन्तिज़ार में टहल रहे थे। मुझको देखते ही बोले,

"मैंने समझ लिया था कि आज आपने भूखों मारा। मंगाइये खाना।"

साहब ने और मैंने हँसी-खुशी खाना खाया और गप-शप करते हम दोनों आलमे-ख्वाब (निद्रा) में पहुँच गये।

दिल चाहता है, कर रहा है। अलबत्ता मैंने वालिद साहब को एक सूट का कपड़ा लाते हुए देखा था। ग़ालिबन वह मेरे अंग्रेज़ बहादुर के लिए होगा।"

मैंने कहा, "तो क्या तेरी शादी किसी गोरे टामी के साथ हो रही है।"

तारा ने खास अंदाज़ से कहा, "नो, नो, नो यू फूल ! वह एक फ़ैशनेबल जैण्टलमैन है, सूट पहनता है, मेज़ पर छुरी-कांटे से खाता है, कुत्ता पालता है।"

निगार ने कहा, " अब कुतिया का शौक़ हुआ है।"

तारा ने कहा, "नान्सेंस फ़ेलो। हमारा साहब बड़ा अपटूडेट है।"

मैंने कहा, "तारा तुझको भी वह मेम बनाकर रखेंगे।"

तारा ने हँसकर कहा, "ओह यस। मगर ना बाबा मैं बाल-वाल नहीं कटाऊँगी।"

निगार ने चाय मंगाने का हुक्म देते हुए कहा, "अच्छा तारा आज, बहुत दिनों के बाद कुछ सुना दो हार्मोनियम पर। फिर तो पियानो बजाया करोगी।"

तारा ने हारमोनियम घसीट कर निहायत मीठे सुरों में 'हाफ़िज़" की ग़ज़ल छेड़ दी।

मन पाक बाज इश्क़म जौक़े-फ़ना चशीदा
आहूए-दश्ते-हू यम अज़मा सिवा रमीदा।"

(मेरा प्रेम पवित्र है और मैं विनाश के रस का आस्वादन कर चुका हूँ। मैं बीहड़ वन के उस हिरन की भाँति हूँ जो इहिलोक एवं परलोक सभी से भागा हुआ है।)

और इस मज़े में ज़ालिम ने गाई है कि निगार और मैं महव होकर रह गये। ग़ज़ल के खत्म होते ही चाय आ गई। हम सबने चाय पी और फिर यही तै पाया कि इसी वक़्त सब लोग मोटर पर दरिया के किनारे चलें। फिर ज़रा कार्निवल घूमा जाये और उसके बाद अपने-

तुमको मेरे दूल्हा ऐसे ही पसन्द थे तो पहले ही तुमने कोशिश की होती।"

निगार ने झेंपकर कहा, "मैं कहती हूँ कि तू अब माँझे बैठी है। अब तू अपने हवासों में रह। जो मुँह में आता है, अब भी हांके जाती है; न आये की शर्म, न गये की।"

तारा ने कहा, "बेशक शर्म तो मुझको करना चाहिये कि जाइज तौर पर अपने शौहर की जौजियत (पत्नी होना) में जा रही हूँ। रह गईं आप कि बारह हाथ का एक शौहर मौजूद है और अपनी सहेलियों के शौहर भी तकती फिरती हैं।"

निगार ने रोनी सूरत बनाकर कहा, "भई अल्लाह यह कमबख्त लड़की कैसी बातें करती है? मुझको ऐसी बातें अच्छी नहीं मालूम होतीं। मैं क्यों किसी के शौहर को तकती फिरूँ? मेरा शौहर खुद ऐसा है कि जो देखे आईना बनकर रह जाये।"

तारा ने कहा, "आईना बनने के लिए सिर्फ़ हुस्न ही की ज़रूरत नहीं है। मुमकिन है कि वह ऐसे करीहुल मन्ज़र हों कि देखने वाला हैरत की वजह से आईना बन जाये। आपने अपने शौहरे-नामदार की यह तारीफ नहीं फ़र्माई है बल्कि हज्वे-मलीह (निन्दा) फ़र्माई है।"

मैंने कहा, "देखती हो निगार इस क़ाबिला की क़ाब्लियत। बला की यह लौंडिया जहीन है। अगर वकील होती तो किसी का रंग अपने सामने जमने न देती।"

निगार ने जलकर कहा, "अल्लाह न करे ऐसी शरीफ़ बहू-बेटियाँ हों। कौन कहेगा इन साहबजादी को शरीफ़ कि माँझे में बैठी हुई हैं और बारह हाथ की ज़ुबनियाँ है कि कैंची की तरह चली जाती है। और फिर न ज़ुबान के आगे खन्दक़ कि जो कुछ मुँह में आया बक दिया।"

तारा ने कहा, "अच्छा निगार अगर तुम ईमानदारी के साथ यह कह दो कि मेरा होने वाला शौहर तुमको पसन्द है तो अभी कुछ नहीं

८

तारा के माँझे में मैंने शिरकत की और सच कहती हूँ कि निहायत ख़ुशी के साथ शिरकत की। मेरे दिल पर क्या गुज़र रही थी इसका ख़ुद मुझको इलम न था कि मैं अपने दिल को उस वक़्त बिलकुल क़ाविले-तवज्जो न समझती थी और उसकी हर क़ैफ़ियात कोनज़र अन्दाज़ करने की मुसलसल कोशिश कर रही थी, अलवत्ता निगार बार-बार नज़र चुरा कर मेरे चेहरे से मेरी क़ल्बी क़ैफ़ियात का अन्दाजा करना चाहती थी और हर मर्तबा उसको हैरत होती थी कि मेरे चेहरे पर सिवाय ख़ुशी और लापरवाही के और कोई अलामत उसको न मिलती थी। तारा को मैंने सबके साथ मिलकर माँझे में विठाया। तारा की वाल्दा ने मेरे लिए भी ज़र्द साड़ी का जोड़ा वनाया था वह मैंने पहना और अपनी प्यारी सौत को घेरे बैठी रही। बड़ी-बूढ़ियाँ हम लड़कियों को आज़ाद करके जब चली गईं तो वही हँसी-मज़ाक़ और ज़िन्दादिली शुरू होगई। निगार मेरी वजहसे मेरे ऊपर तारी होने वाले असरातको अपने ऊपर किये हुए थी, लेकिन मैंने उनको भी हँसाने और उस असर को भूल जाने के लिए तारा से कहा, "तारा तेरा दुल्हन वनना निगार से ज़्यादा शायद किसी को वुरा नहीं मालूम हुआ। तूने ख़्वाहमख़्वाह अपने दूल्हा की तसवीर इसको दिखाई थी।"

निगार ने यकायक चौंककर कहा, "क्या कहा तुमने ? क्या मतलव इससे तुम्हारा ?"

तारा ने कहा, "मतलव इससे यही है कि ख़ुदा न करे कि कोई ह़ासिद हो। बहन तुम्हारी शादी हो जाने के वाद मैंने शादी की है।

क्या फ़ायदा ?"

यह कहकर बड़ी बी तो चली गईं और उधर हम तीनों में फिर मज़ाक़ शुरू हो गया। मगर चूंकि, अब तारा को यह मालूम हो चुका था कि हम दोनों चले जायेंगे। लिहाज़ा उसने निगार को छेड़ना मुनासिब न समझा और उसी खुशामद में लगी रही कि कल फिर हम दोनों आयें। बहरलाल उसने हम दोनों से ज़बरदस्ती गोया सीने पर सवार होकर कल फिर आने का वादा लिया और उसके बाद चाय पीने को दी। चाय पीकर हम दोनों रुख्सत हुए।

निगार ने रास्ते ही में कहा, "रज़िया तुम तो शायद पत्थर की बनी हो, मगर मैं क्या करूँ ? मेरा दिल रह-रहकर जैसे कोई मरोड़ रहा है और जिस क़दर वक़्त क़रीब आता-जाता है मैं मुज़महिल होती जाती हूँ।"

मैंने कहा, "मैं पत्थर की और तुम हो बेवक़ूफ़, फ़र्क़ सिर्फ़ इतना ही है। मगर यह बताओ कि अब क्या तरीक़ा इख्तियार किया जाये। तुम कहती हो कि साहबसे कुछ कहा न जाये।"

निगार ने बात काटकर कहा, "हाँ, हरगिज़ तुम कुछ न कहो। वह खुद तुमसे कहेंगे, अब कब तक तुमसे चुराते रहेंगे।"

निगार ने यह जुमला निहायत ग़ुस्से से कहा था, मैंने कहा, "और तारा को भी खबर न हो ?"

निगार ने कहा, "हरगिज़, हरगिज़ नहीं। निकाह से पहले क़तअन नहीं। बल्कि निकाह के बाद कोशिश यह करूँगी कि तारा की रुख्सती के वक़्त मुझको और तुमको तारा के साथ रवाना किया जाये। उस वक़्त यह किस्सा खुलना चाहिये और तारा को उस वक़्त तमाम क़िस्सा सुनाकर अपना शरीके-राज़ बल्कि अपना साज़िशी बना लेंगे और फिर तुम्हारे साहब को तिगनी का नाच नचाया जायेगा ताकि उनको इस चोरी और राज़दारी की सज़ा तो मिले।"

मैंने कहा, "तो क्या तुम मेरे साहब को सचमुच परेशान करोगी ?"

निगार ने आँखें निकालकर अज़्म (दृढ़ता)के साथ कहा, "बेशक।"

मैंने कहा, "उन वेचारों ने तुम्हारा क्या विगाड़ा है?"

निगार ने कहा, "वड़े आये वेचारे! देखना तेरे वेचारे को कैसा वेचारा वनाती हूँ।" मोटर दरवाजे पर रुकी और निगार से हाथ मिलाकर मैं अपने घर उतर गई।

साहव मेरे इन्तिज़ार में खुदा जाने कितने सिगारों का खून कर चुके थे। मुझको देखते ही सिगार का धुंआँ छोड़ते हुए वोले:

"अव भी पूछा तो मेहरवानी की।"

मैंने कहा, "क्या आज आप टेनिस खेलने नहीं गये?"

साहव ने मुझको वनाते हुए कहा, "आज मेरे वजाय आप टेनिस खेलने गई हुई थीं। मैं वारिश में नहीं खेल सकता।"

मैंने साहव से कमरे में चलने को कहा ताकि मैं तव्दीले-लिवास कर सकूं और फिर वहीं नाशिस्त हो। साहव ने कहा कि नहीं इस वक़्त कुछ जरूरी वातें करना है लिहाज़ा इमकान की पुश्त के सव्ज़ज़ार पर चलो। मैंने उसमें कोई उज्र न किया और लिवास भी तव्दील करने का इरादा इसलिए मुलतवी कर दिया कि मेरा खयाल था कि आज साहव मुझसे इस शादी का ज़िक्र करेंगे। इसलिए कि कव तक वह इस ज़िक्र को टाल सकते थे। वहरहाल मैं उनकेसाथ हो ली।

साहव ने सव्ज़ज़ार पर पहुँचकर, मेरे शाने पर हाथ रख कर इस तरह दवाया कि मैं वैठ गई और वह खुद भी मेरे क़रीव ही वैठ गये। मैं महसूस कर रही थी कि आज वह कुछ शशो-पंज (दुविधा) में मुव्तिला हैं और चेहरे से मुतफ़क्किर-से मालूम हो रहे हैं। चुनाँचे यहाँ वैठकर भी वह देर तक अपने परेशान खयालात को यकजा करने की कोशिश में सर झुकाये वैठे रहे। वार-वार कुछ कहना चाहते थे और फिर रुक जाते थे। आखिर मैंने खुद उनकी इस मुश्किल को आसान वनाने के लिए कहा:

"क्या वात है?"

साहबने अपनी झुकी हुई गर्दन उठाकर मेरा चेहरा देखा और फिर गर्दन झुकाकर बोले, "रज़्ज़ो मुझे तुमसे आज एक खास बात कहनी है।"

मैंने साहब की इस झिझक को दूर करने के लिये कहा, "अच्छा तो आप मुझ से भी कोई ख़ास बात कहने के लिए इस तरह बार-बार इजाज़त तलब करेंगे गोया वाइसराय से गुफ़्तगू कर रहे हैं।"

साहब ने हँसकर कहा, "बेशक तुम मेरी वाइसराय हो। मुझको आज तुमसे कुछ ग़ैरमामूली बात कहनी है।"

मैंने कहा, "आपने पहले कहा ख़ास बात, अब कह रहे हैं ग़ैर-मामूली बात। बहरहाल जो फ़र्माना हो फ़र्माइये, मैं सरापा गोश हूँ।"

साहब ने कहा, "रज़्ज़ो, तुमने मुझसे बार-बार कहा है कि··· यानी तुमने हमेशा मुझसे इसरार किया है कि तुम मुझको बार-बार इस सिलसिले में मजबूर करती हो···मजबूर करती रही हो कि···तुमने पूरी कोशिश की है···तुमको हमेशा इस ज़िक्र से दिल-चस्पी रही है और तुमने···तुमने···यानी मुझको इस बात पर आमादा करने की···।"

साहब संजीदगी के साथ बड़बड़ा रहे थे और मुझको उनके इस भोलेपन पर हँसी आ रही थी। वह मुजरिम ज़रूर थे मगर आदी मुजरिम नहीं बल्कि खामकार। चुनांचे आज एतएफ़-जुर्म में उनकी जुबान को इस क़दर लग्ज़िशें हो रही थीं और किसी तरह उनसे कुछ न कहा जाता था। बहरहाल जब देर तक वह हकला चुके तो मुझसे हँसी ज़ब्त न हुई और मैंने बेसाख़्ता हँसकर कहा :

"तोबा है किसी तरह कह भी चुकिये। यह आख़िर आज आपको हो क्या गया है? मालूम होता है कि आज आपने मेरा हार्मोनियम तोड़ डाला है मेरा वह लाकेट जो आप बनवाने गये थे कहीं गिर पड़ा, आख़िर बात क्या है?"

साहब ने मेरी हँसी के बावजूद सजीदा होकर कहा, "मैं यह कह रहा था कि तुम मेरी शादी करना चाहती थीं···।"

मैंने बात काटकर कहा, "खैर अब इस तकलीफ़देह ज़िक्र को छोड़िये, मैं इस सिलसिले में एक लफ़्ज़ भी सुनना नहीं चाहती।"

साहब ने मेरा हाथ पकड़ कर कहा, "नहीं रज़्ज़ो, तुम बुरा न मानो। मैं तुम्हारी इस ख्वाहिश को पूरा करूंगा। मुझको एहसास है कि इस सिलसिले में मेरा पै-दर-पै (निरन्तर) ज़िद ने तुमको सदमा पहुँचाया है।"

मैंने दिल-ही-दिल में साहब की ज़हानत की दाद देते हुए कहा, "मुझको आपके इस सिलसिले में इन्कार करने से क़तअन कोई सदमा नहीं पहुँचा। मैं जानती हूँ कि आपको मुझसे बेहद मुहब्बत है और आप मेरी मुहब्बत में इसको बर्दाश्त नहीं कर सकते कि कोई और शरीक हो। मैंने आपकी इस वालिदाना (पैतृक) मुहब्बत का जिस वक़्त से अन्दाज़ा किया है उसी वक़्त से इस सिलसिले में खामोश होगई हूँ और अब मैं इस ज़िक्र को इसलिए छेड़ना नहीं चाहती कि कहीं मेरा दिल फिर न चाहने लगे कि आपकी दूसरी शादी हो और मेरे हाथों हो।"

साहब ने कहा, "नहीं रज़्ज़ो, तुम मुझको माफ़ कर दो कि मैंने तुम्हारी इस ख्वाहिश को ठुकराया।"

मैंने कहा, "बहरहाल अब यह ख्वाहिश मेरी ख्वाहिश हरगिज़ नहीं है।"

साहब ने कहा, "मैं अब शादी के लिए तैयार हूँ बल्कि जल्द-से-जल्द तुम्हारी इस ख्वाहिशे-देरीना (चिर अभिलाषा) की तक़मील करूंगा।"

मैंने कहा, "जी नहीं वाज़े रहे कि यह ख्वाहिश अब मेरी ख्वाहिश नहीं है। मैं इस सिलसिले को अपने ज़हन से निकाल बाहर कर खाली-उज़ुज़-ज़हन हो चुकी हूँ।"

साहब ने मुझको मज़ीद बेवकूफ बनाते हुए कहा, "अच्छा आपकी न सही मेरी ख्वाहिश सही और अगर यह अब आपकी नहीं बल्कि मेरी

ख्वाहिश है तो आपसे मैं इजाज़त तलब करने का पाबन्द हो गया।"

मैंने कहा, "इजाज़त तलब करने की पाबन्द आपसे मैं हूँ न कि मुझसे आप।"

साहब ने कहा, "तो क्या आपको भी मुझसे इसी क़िस्म की इजाज़त की ज़रूरत पेश आई है।"

मैंने साहब के इस मज़ाक़ को समझकर कहा, "ख़ुदा न करे आप मेरे ऊपर तो करम ही फर्माइये। मेरे मुताल्लिक ऐसी बात करते हुए आपकी ज़ुबान को लड़खड़ाना चाहिये था।"

साहब ने हँसकर मेरे मुँह पर हल्का-सा तमाँचा मारा, जिसपर मैं रोने के बजाय हँस दी और साहब ने मेरा हाथ पकड़कर सब्ज़ाज़ार से उठाते हुए कहा, "अब चलिये चलें। मैं आज कमला झरिया का एक ऐसा लाजवाब रेक़ार्ड लाया हूँ कि आप भी झूम जायेंगी। क्या गाती है यह कमबख़्त भी।"

साहब ने कमरे में लाकर ग्रामोफोन बजाना शुरू कर दिया और मैं किसी ख़याल में ख़ोई हुई बज़ाहिर ग्रामोफोन सुनती रही।

९

आज मेरी सौत की आमद-आमद थी यानी मेरे शौहर की एक और शरीक, मेरी हमसरी की एक और दावेदार और मेरी हुकूमत की एक नई वारिसा आ रही थी। मगर इस शान से कि मैं ख़ुद उसको लाने के लिए सुबह ही से तैयारियों में मसरूफ़ थी। घर तो ख़ैर दस-

मैंने बात काटकर कहा, "खैर अब इस तकलीफ़देह ज़िक्र को छोड़िये, मैं इस सिलसिले में एक लफ़्ज़ भी सुनना नहीं चाहती।"

साहब ने मेरा हाथ पकड़ कर कहा, "नहीं रज़्ज़ो, तुम बुरा न मानो। मैं तुम्हारी इस ख्वाहिश को पूरा करूँगा। मुझको एहसास है कि इस सिलसिले में मेरा पै-दर-पै (निरन्तर) ज़िद ने तुमको सदमा पहुँचाया है।"

मैंने दिल-ही-दिल में साहब की ज़हानत की दाद देते हुए कहा, "मुझको आपके इस सिलसिले में इन्कार करने से क़तअन कोई सदमा नहीं पहुँचा। मैं जानती हूँ कि आपको मुझसे बेहद मुहब्बत है और आप मेरी मुहब्बत में इसको बर्दाश्त नहीं कर सकते कि कोई और शरीक हो। मैंने आपकी इस वालिदाना (पैतृक) मुहब्बत का जिस वक़्त से अन्दाज़ा किया है उसी वक़्त से इस सिलसिले में खामोश होगई हूँ और अब मैं इस ज़िक्र को इसलिए छेड़ना नहीं चाहती कि कहीं मेरा दिल फिर न चाहने लगे कि आपकी दूसरी शादी हो और मेरे हाथों हो।"

साहब ने कहा, "नहीं रज़्ज़ो, तुम मुझको माफ़ कर दो कि मैंने तुम्हारी इस ख्वाहिश को ठुकराया।"

मैंने कहा, "बहरहाल अब यह ख्वाहिश मेरी ख्वाहिश हरगिज़ नहीं है।"

साहब ने कहा, "मैं अब शादी के लिए तैयार हूँ बल्कि जल्द-से-जल्द तुम्हारी इस ख्वाहिशे-देरीना (चिर अभिलाषा) की तक़मील करूँगा।"

मैंने कहा, "जी नहीं वाज़े रहे कि यह ख्वाहिश अब मेरी ख्वाहिश नहीं है। मैं इस सिलसिले को अपने ज़हन से निकाल बाहर कर खाली-उज़ुज़-ज़हन हो चुकी हूँ।"

साहब ने मुझको मज़ीद बेवकूफ बनाते हुए कहा, "अच्छा आपकी न सही मेरी ख्वाहिश सही और अगर यह अब आपकी नहीं बल्कि मेरी

ख्वाहिश है तो आपसे मैं इजाज़त तलब करने का पावन्द हो गया।"

मैंने कहा, "इजाज़त तलब करने की पाबन्द आपसे मैं हूँ न कि मुझसे आप।"

साहब ने कहा, "तो क्या आपको भी मुझसे इसी क़िस्म की इजाजत की ज़रूरत पेश आई है।"

मैंने साहब के इस मज़ाक़ को समझकर कहा, "ख़ुदा न करे आप मेरे ऊपर तो करम ही फर्माइये। मेरे मुताल्लिक ऐसी बात करते हुए आपकी ज़ुबान को लड़खड़ाना चाहिये था।"

साहब ने हँसकर मेरे मुँह पर हल्का-सा तमाँचा मारा, जिसपर मैं रोने के बजाय हँस दी और साहब ने मेरा हाथ पकड़कर सब्ज़ाज़ार से उठाते हुए कहा, "अब चलिये चलें। मैं आज कमला झरिया का एक ऐसा लाजवाब रेकार्ड लाया हूँ कि आप भी झूम जायेंगी। क्या गाती है यह कमबख़्त भी।"

साहब ने कमरे में लाकर ग्रामोफोन बजाना शुरू कर दिया और मैं किसी खयाल में खोई हुई बज़ाहिर ग्रामोफोन सुनती रही।

९

आज मेरी सौत की आमद-आमद थी यानी मेरे शौहर की एक और शरीक, मेरी हमसरी की एक और दावेदार और मेरी हुकूमत की एक नई वारिसा आ रही थी। मगर इस शान से कि मैं ख़ुद उसको लाने के लिए सुबह ही से तैयारियों में मसरूफ़ थी। घर तो ख़ैर दस-

पन्द्रह दिन पहले से निहायत ख़ामोशी के साथ साफ़ कर रही थी, मगर आज ख़ुद अपने बनाव-सिंगार में मसरूफ़ थी। मुझको इस कमज़ोरी का एतराफ़ है कि एक मर्तबा तो गुस्लख़ाने में ख़ुदा जाने क्या-क्या खयाल दिल में आये कि बेसाख्ता आँखों से टपाटप आँसू गिरने लगे, मगर ख़ुद ही मेरा दिल संभल गया और मैंने अपनी इस हिमाक़त पर अपने को मलामत की और उसके बाद से अपनेदिल में ज़रा भी इस खयाल को जगह न दी कि यह मौक़ा मेरे लिए अफ़सोस का मौक़ा है। बल्कि निहायत हँसी-ख़ुशी से अपनी तैयारियों में मसरूफ़ रही। साहब सुबह ही घर से जा चुके थे लिहाज़ा मुझको अपनी तैयारियों के सिलसिले में आज़ादी थी। यह मैं उनको सुना ही चुकी थी कि मेरी सहेली स्वरूपरानी कलकत्ते से आई हुई है, कल वापस चली जायेगी। लिहाज़ा मैं आज उसके पास जाती हूँ और कल से पहले वापस न आ सकूँगी। साहब तो ख़ुदा से चाहते थे कि आज मैं कहीं टल जाऊँ, लिहाज़ा "बहुत अच्छा सरकार।" कहकर गोया वह मुझ पर एहसान फ़र्मा चुके थे। बहरहाल मैं बारह बजे से पहले ही बिल्कुल तैयार होगई। इसलिए कि निगार ने ठीक बारह बजे मोटर भेजने को कहा था। ख़ुद तो वह बेगम साहबा दो दिन से वहाँ थीं मगर मैं रोज़ जाती थी और घण्टा-दो-घण्टा रह कर वापस आ जाती थी। इसलिए कि मेरा मुस्तक़िल रहना निगार ने और ख़ुद मैंने भी क़रीन-मेंस्लेहत (समुचित) न समझा। मैं अभी तैयार ही हुई थी कि मोटर आ गया और मैं निहायत ज़ौक़ो-शौक के साथ अपनी सौत को लाने के लिए रवाना हो गई।

तारा के यहाँ पहुँचते ही निगार ने ड्योढ़ी ही में मुझको दबोच लिया और दो-तीन प्यार करके बोली, "मैं सदक़े अपनी बन्नो पर से मालूम होता है कि राजा इन्दर के अखाड़े से परी उत्तरी है। बहन क्या तुम्हारी ही शादी है?"

मैंने निगार के कान में चुपके से कहा, "मेरी नहीं, मेरे शौहर

की तो है।"

मेरा यह कहना था कि तमाम शोखी रुखसत हो गई और चेहरे पर यकायक वह रंग आया, गोया बस रोने ही वाली है। लिहाजा मैंने बात टालने के लिए कहा, "आजआपके शोफ़र साहब तो हैं कहीं गायब, खुद भाई साहब! ग़ालिबन मोटर लेकर आये थे। तुमने उन्हें इतनी ज़हमत क्यों दी? मैं बहुत शर्मिन्दा हूँ कि मेरी वजह से उनको दिक़्क़त पड़ी।"

निगार ने फिर चेहरे पर ताजगी पैदा करते हुए कहा "सच पूछो तो बताऊँ, अच्छा चलो तारा के पास वहीं आज असल क़िस्सा बयान होगा।"

मैंने निगार का हाथ पकड़ कर कहा, "कौन-सा क़िस्सा···?"

निगार ने हाथ झटक कर कहा, "बेवक़ूफ़ कहीं की। वह क़िस्सा नहीं बल्कि एक और।" और यह कहकर मुझको पकड़े हुए उस कमरे में पहुँची जहाँ तारा बैठी थी। तारा के कमरे में उस वक़्त लड़कियाँ भरी हुई थीं, मगर तारा ख़ामोश बैठी थी। मुझको देखते ही एकदम से बोली, "अख्ख़ाह आज तो आप क़ौसे-कज़ा की ख़ाला मालूम होती हैं और कहकशाँ की नानी। क़दम-क़दम की ख़ैर।"

मैंने कहा, "ओ लंका, आज सिर्फ़ चंद घण्टे ख़ामोश बैठ जाय तो तेरा कौन-सा हर्ज हो जाये।"

तारा ने बनकर कहाँ, "अरे माफ़ कीजियेगा। मैं भूल गई थी।"

निगार ने कहा, "और भी कुछ सुना कि इस तमाम बनाव-सिंगार के साथ इन सरकार को अकेले मोटर पर तुम्हारे दूल्हा भाई लेकर आये हैं।"

मैंने कहा, "तो फिर?"

निगार ने कहा, "तो फिर यह कि बहन मुझको तुमसे यह उम्मीद न थी कि तुम मुझ ही पर डाका डालोगी। वह तो ख़ैर अर्से से तुम्हारे लिए बेक़रार थे, मगर आज मालूम हुआ कि सरकार को भी इन्कार

न था…।"

मैंने निगार की पीठ पर दुहत्तर मार कर कहा, "ओ कमबख्
क्या बकती चली जाती है?"

तारा ने संजीदगी से कहा, "ख़ैर यह मजाक में टालने की बा
नहीं है। एक घर की तबाही और एक ज़िन्दगी बक़ा व फ़ना व
मसला है।"

मैंने तारा के रुख्सारपर हल्का-सा तमाचा मारकर कहा, "बुक़रा
तारा ने कहा "यह आपकी तारीखदानी का नतीजा है कि गोय
बुक़रात के दुम भी थी।"

इस जुमले की बलाग़त को सिर्फ़ मैं समझ सकी और तारा
बग़ैर कुछ सोचे-समझे कहा, "क्या सेकण्ड हैण्ड हैं वह हजरत।"

मैंने कहा, "बहरहाल जो कुछ भी हैं हाज़िर है।"

हम लोग ये बातें कर ही रहे थे कि ताराकी बड़ी मुमानी कम
में आई और बम के गोले की तरह फट कर बोली, "ऐ है लड़किय
तुम दुल्हन को क्या यों ही बिठाये रखोगी—न नहलाओगी, न धुला
ओगी। दो बजने को हुए, चार बजे बारात आ जायेगी और दुल्हन
न नहाने का इन्तिजाम न धोने का।"

तारा तो ख़ैर अपनी मुमानी को देखकर गर्दन झुकाकर दुल्ह
बन चुकी थीं, मगर निगार ने और मैंने उनको सलाम किया, जिसक
जवाब उन्होंने यही दिया कि बस अब उठो, नहलाओ-धुलाओ औ
दुल्हन बनाओ। अब बातों का वक़्त नहीं है जाड़ों का दिन है बूंद भ
का।"

यह कह कर वह तो अपने पाँयचे संभालती हुई बाहर आ ग
और उधर मुलाज़िमा ने तारा के कमरे से मिले हुए गुस्लखाने में पान
लाकर रख दिया और हम लोगों से कह दिया कि पानी तैयार है।

---

*विश्व-विख्यात यूनानी हकीम तथा दार्शनिक।

तारा ने चुपके से कहा, "तो क्या तुम लोग नहलाओगी मेरी मैयत ?"

मैंने इसके जयाव में वह तड़ाखेदार तमाँचा मारा उस वदतमीज के मुँह पर कि याद तो करती ही होगी और उसको ढकेल कर गुस्लखाने में पहुँचा दिया और कह दिया।

"ले अब नहाओ तुम अपने हाथ से। हम लोग क्या तुम्हारी लौण्डी-बाँदियों में से हैं"

तारा ने इसके जवाव में अकड़ कर कहा, "मेरी स्लीपर लाओ। ऐ वुआ मेरा जूता साफ करो।" यह कहकर गुस्लखाने का दरवाज़ा वन्द कर लिया। ग़ुस्ल से फारिग होकर तारा वाहर निकली तो हम सवने मिलकर उनको हिमाक़त कार्टून वनाने में अपनी पूरी सन्नाई सर्फ़ कर दी और चार वजे से वहुत पहले दुल्हन वनाकर विठा दिया। यहाँ तक की तारा की मुमानी, उसकी खाला और उसकी वाल्दा सव फ़र्दन-फ़र्दन आकर दुल्हन का मुआयना कर गईं और इज़हारे-इत्मिनान कर गईं। अव हम लोगों ने तारा से निहायत संजीदगी के साथ अपील की कि अव ज़रा दुल्हन वन कर थोड़ी देर के लिए शर्म कर लो। चुनांचे तारा गर्दन झुकाकर और घुटने पर अपना मुँह रखकर वैठ गई। अलवत्ता घूँघट के अन्दर से कभी-कभी चुपके से वोल ज़रूर देती थी। मैं और निगार दोनों उसके इधर-उधर वैठी हुई थीं। लिहाजा कभी वह मुझसे कुछ कह देती और कभी निगार से कुछ इरशाद हो जाता था। एक मर्तवा मेरे ज़ानू (घुटने) में चुटकी लेकर वोली, "साथ तुम ही दोनों चलना।"

मैंने कहा, "चुप कोई सुन लेगा।"

कहने लगी, "अच्छा चलोगी ना ?"

मैंने कहा, "अरी तुझसे चुप न वैठ जायेगा।"

निगार ने कहा, "मुँह से कह रही हो, म[illegible] क्यों यह जुवान से नहीं मानेगी।"

हम लोगों में ये बातें हो ही रही थी कि बाहर मोटरों के रुकने और उसी के साथ 'दूल्हा आ गया, दूल्हा आगया' की आवाज़ें फ़िज़ा में गूंज उठी। उधर से निगार और इधर से मैं दोनों इस तरह से उटे कि टक्कर होते-होते बची। हम दोनों लपककर सहन में आगये जहाँ से बाहर देखने के लिए खिड़कियाँ थीं। हम दोनों ने जल्दी से एक खिड़की पर क़ब्ज़ा कर लिया वर्ना दूसरी औरतें झपट रही थीं। खिड़की खोलकर देखा तो बाहर का पूरा मन्ज़र बिल्कुल सामने ही था। मैंने देखा कि साहब उसी लिबास में जो घर से पहन कर सुबह गये थे, मोटर से उतरे। उनके साथ उनके चन्द दोस्त थे। साहब के चेहरे पर यक़ीनन मसर्रत होना चाहिये थी, इसीलिये, कि मसर्रत का मौक़ा ही था। मगर मैंने देखा कि उनके चेहरे पर तफ़क्कुर (चिन्ता) के आसार थे। कुछ वह सहमे हुए-से मालूम हो रहे थे और उनके सीने के उतार-चढ़ाव से यह मालूम हो रहा था कि गोया साँस फूल रही है। मुझको उनकी इस हालत पर तरस भी आया और हँसी भी। मगर निगार को सख्त ग़ुस्सा आ रहा था; उसने मेरा शाना झिंझोड़ते हुए कहा, "देखो तो खुश किस क़दर हैं। मारे खुशी के पेट में साँस नहीं समाती।"

मैंने कहा, "खुश तो नहीं, अलबत्ता घबराये हुए बहुत हैं। जैसे कोई चोर रात के सन्नाटे में सर्क़े (चोरी) की नीयत से किसी मकान में घुसे और फूंक-फूंककर क़दम रखे।"

निगार ने कहा तो क्या चोर होने में कोई शुब्हा भी है? तुम तरफ़दारी करो, मगर मेरा तो खून खौल रहा है।"

मैंने निगार की गर्दन में बाँहें डालकर कहा, "बहन, ऐसा न कहो। अब उनकी खुशी को मेरी खुशी और मेरी खुशी को अपनी खुशी बना लो और इस खयाल को दिल से निकाल डालो। देखो तुम्हारे लिए मैं और तारा दोनों यकसां हैं और इस तरह सारा खेल खराब होने का अंदेशा है। अब तो इस क़िस्से से लुत्फ़ उठाओ। अव्वल तो रंज था ही नहीं और अगर था भी तो उसका वक़्त निकल गया।"

निगार ने आँखों-ही-आँखों मुझको खा जाने का इरादा करके घूरा और खामौश हो रही। मैंने बाहर निगार के साहब को देखकर यकायक कहा।

"अरे निगार हाँ, यह तो बताओ कि दुल्हा भाई को इस वक़्त साहब को देखकर कोई ताज्जुब तो नहीं हुआ। वह तो टहल रहे हैं गोया कोई बात ही नहीं है।"

निगार ने कहा, "मैं सारा क़िस्सा सुना चुकी हूँ। पहले तो सख्त खफ़ा थे और मारे जोश के क़सम खा चुके थे कि तारा के वालिद को तमाम क़िस्से से आगाह कर देंगे। मगर जब मैंने तुन्हारी तरफ से खुशामदाना इसरार किया और तमाम नशेबो-फ़राज समझाये तो आप का मिजाज दुरुस्त हुआ। उनको तो तमाम क़िस्सा इसी तरह मालूम है जिस तरह मुझको या तुमको। लिहाज़ा उनको ताज्जुब क्यों होता? अलबत्ता तुम्हारे साहब के घबराने की वजह उन हज़रत की मौजूदगी है।"

मैंने कहा, "ठीक कहती हो निगार। वह मोटर से उतरने के बाद से बराबर उनको देख-देखकर नज़रें बचा रहे थे और उनके चेहरे पर परेशानी का मद्दो-नज़र था। ग़ालिबन उसकी वजह यही है।"

हम लोग देर तक खिड़की में खड़े बातें करते रहे। आखिर तारा की वाल्दा ने बाजू पकड़ कर कहा, "वाह बेटा वाह! दुल्हन को अकेला छोड़कर तुम दोनों चली आई, जब उसके साथ जाओगी तो क्या करोगी? चलो वहीं।"

हम दोनों तारा के पास आकर बैठ गईं। मैंने झुककर तारा के कान में कहा, मुबारक हो तुम्हारे वह आ गये।"

तारा ने चुपके से कहा, "खुश-आमदीद। उनका घर है शौक से आयें, तेरा क्या इजारा है।"

निगार ने एक ठोकर मारकर कहा, "अरी चुप।"

अभी ये बातें हो ही रही थीं कि 'पर्दा करो, पर्दा करो।' का शोर

उठा और फ़ौरन ही एक भगदड़ मच गई। तारा की वाल्दा और उन की खाला और मुमानी तारा के पास आ गईं और सामने एक पर्दा डाल दिया गया है। पर्दा होते ही वकील और गवाह दुल्हन के पास आ गये और मेरे शौहर के साथ अक़्द (निक़ाह) की मंजूरी मेरी सहेली से ले कर चले गये। मैं बिल्कुल खामोश थी और निगार भी चुप। सिर्फ यह हुआ कि निगार ने एक मर्तबा मुझको और मैंने निगार को अजीब नज़रों से देखा। उसके बाद खुदा जाने किस जज़्बे के मातहत मैं बेसाख्ता तारा को लिपट गई और आँखों से आंसू कुछ इस तरह जारी हो गये कि निगार, तारा, तारा की वाल्दा सबने महसूस किया कि मैं रो रही हूँ। मगर मेरे इस रोने के मानी कुछ और ही समझे गये। अलबत्ता अगर कुछ समझी तो निगार समझी और उसके समझने ही से यह क़यामत आई कि खुद वह भी फूट-फूटकर रोने लगी। हम दोनों के रोने से तारा भी बग़ैर कुछ सोचे-समझे रोने लगी। चन्द मिनट तक मैं इसी आलम में रही, उसके बाद मैंने अपने आंसू पोंछे और ज़बरदस्ती बरशाश होने की कोशिश करते हुए तारा के एक चुटकी लेकर कहा;

"चल मैं नहीं रोई तुझ चुड़ैल के लिए।"

तारा को यकायक हँसी आ गई : खैरियत यह हुई कि उसकी खिल-खिलाहट सिर्फ मैं ही समझ सकी, बाकी सब औरतों ने इस हँसी को भी रोना ही समझा कि निगार अलबत्ता गर्दन झुकाये चुप बैठी रही और उस वक़्त तक चुप रही जब तक कि खाने का बखेड़ा न फैल गया। खाने के बाद दुल्हन की रुख्सती की तैयारियाँ शुरू हुई जिसके हमराह मुझको और निगार को जाना पड़ा।

दुल्हन जिस घर में उतारी गई थी वह मेरा मकान न था। ग़ालिबन साहब ने किसी और मकान का इन्तिज़ाम कर लिया था। इसलिए कि मकान का तमाम सामान नया और बाजबी-बाजबी था, अलबत्ता एक मुलाज़िमा थी और एक लड़का काम करने के लिए।

यहाँ आकर हम दोनों आधी रात तक तारा से हँसी-मजाक करते रहे। उसके बाद तारा को मैं अपनी गद्दी पर बिठाकर ख़ुद दूसरे कमरे में निगार के साथ आ गई। मेरा साहब से आज वैसा ही पर्दा था जैसा कि निगार का साहब से था।

१०

मैंने रात अपने साहब के इस नये महल में अजीब आलम में गुज़ारी। निगार मेरे क़रीब ही जिस पलंग पर लेटी थी वह पलंग रात भर खाली पड़ा रहा और यह बेगम साहबा तमाम रात मेरे ही पास लेटी रहीं और लेटी इस तरह रहीं कि थोड़ी-थोड़ी देर के बाद आप पर गिरिया (रोना का दौरा पड़ता था। हालांकि मैं ख़ामोश थी और वाक़ई अब सिवाय खामोशी के चारा ही क्या था इसलिये कि जो कुछ होना था, हो चुका था। मगर निगार पर तो वह आलम था कि गोया यह वाक़्या इसी के ऊपर गुजर रहा है। आखिर मुझसे न रहा गया और मैंने सुबह के क़रीब उससे कहा :

"सुनिये सरकार आपके इस रोने-धोने से मैं एक ग़लतफ़हमी में मुब्तिला हो सकती हूँ।"

निगार ने चौंककर कहा, "मैं नहीं समझी।"

निगार ने चौंककर कहा, "वह क्या······?"

मैंने कहा, "आप मेरी हमदर्दी में नहीं, बल्कि साहब की मुहब्बत

में अपनी जान दिये देती हूँ।"

निगार ने कहा, "मैं नहीं समझी।"

मैंने कहा, "समझने की कोशिश करो तो समझो। तुमको ऐसा बुरा मालूम हो रहा है कि गोया तारा ने तुम्हारे हुक़ूक पर भी डाका डाला है और अब साहब के तीन हिस्सेदार हो गये हैं— मैं, तारा और तुम।"

"निगार ने एक घूंसा मारकर कहा, "ख़ुदा की मार तुझ पर और शाबाश है तुझको कि शौहर सीने पर मूंग दल रहा है और आपको मज़ाक सूझ रहा है।"

मैंने कहा, "तो फिर तुम ही बताओ कि सिवाय मज़ाक़ के और क्या करूँ ? क्या अपनी तारा की यजकाई पर रोना शुरू करूं ?"

निगार ने कहा, बहन, अगर तुम्हार शौहर आदमी है तो उसको चाहिये कि तुम्हारी परस्तिश (पूजा) करे और अगर तारा में ज़रा एहसासे-शराफ़त है तो वह तुम्हारी लौंडी बनकर रहेगी।"

मैंने कहा, "वाह, मेरी तारा लौंडी बनकर क्यों रहेगी ? मेरी बहन बनकर, मेरे शौहर की दुल्हन बनकर रहेगी और मेरे घर की रानी बनकर रहेगी।"

उस वक़्त सुबह हो चुकी थी और आफ़ताब तुलू (उदय) होने में कुछ ही देर थी कि किसी के बाहर जाने की आवाज़ आई और साथ ही हम लोगों के साथ जो मुलाज़िमा आई थी, उसने आकर कहा।

"चलिये बिटिया बुला रही हैं, दूल्हा मियाँ बाहर गये।"

मैंने निगार को पकड़कर खचा और हम दोनों तारा के कमरे में चले गये। तारा ने हम दोनों को देखते ही कहा :

"तशरीफ़ लाइये, अरे कोई है ? आपके लिए हुक़्क़ा लाओ।"

'निगार ने कहा, "बहुत खुश है।"

"मैंने कहा, "फूली नहीं समाती।"

"तारा ने बनकर कहा, "यह सब आपका हुस्ने-नज़र है, मैं किस काबिल हूँ ?"

निगार ने कहा, "मगर साहब हमने वाक़ई ऐसी बेग़ैरत औरत नहीं देखी।"

तारा ने कहा, "यह भी फ़ैज़े-सोहबत है।"

मैंने कहा, "वाक़ई तारा तो है बेहया।"

तारा ने कहा, "सब कुछ आप ही का दिया हुआ है।"

मैं इस जुमले पर ज़रा चौंकी, मगर तारा ने लाइल्मी (अज्ञान) में योंही यह जुमला कह दिया था। निगार ने मुझको चौंकता देखकर कहा :

"अच्छा तो यह बताओ रज़्ज़ो कि तुम तारा से कब तक छुपाओगी क़िस्सा ?"

मैं एक सन्नाटे में आ गई और तारा ने चौंककर कहा :

"कैसा क़िस्सा ?"

निगार ने कहा, "एक बात है फिर बताऊँगी।"

तारा ने मुझसे बहुत मुहब्बत से कहा, "तुम बताओ मेरी प्यारी रज़्ज़ो। बड़ी अच्छी बता तो दे शाबाश, शाबाश।"

मैंने निगार को देखते हुए कहा, "अच्छा तो फिर मैं ही बताऊँगी।"

निगार ने गर्दन हिला दी और मैंने तारा की गर्दन में बाँहें डालकर कहा, "तारा पहले तुम इसका वादा करो कि जो कुछ मैं बताऊँगी उसका किसी से तज़किरा न करोगी। यहाँ तक कि अपने साहब से भी न कहोगी और अपने घर में भी किसी से न कहोगी। इसके अलावा तुम मुझको इससे भी ज्यादा चाहोगी जितना अब चाहती हो।"

तारा ने जो मुँह उठाये हुए मेरी इस संजीदा गुफ़्तगू को सुन रही थी, कहा :

"मैं तुमको अब भी चाहती हूँ, जी चाहता है कि तुमको और इस निगार को उठाकर कलेजे में रख लूं। रह गई यह बात मैं इसको

किसी से न कहूँगी इसका मैं वादा करती हूँ।"

मैंने कहा, "वादा करो कि तुम मुझको अपने साहब से ज्यादा चाहोगी।"

तारा ने कहा, "अच्छा अब ज़रा मुँह धोकर तशरीफ़ लाइये, बद-तमीज़ कहीं की। न बात कहती है न कुछ, बक-बक किये जाती है। अच्छा अब बताओ क्या बात है ?"

मैंने तारा को खूब भींचकर कहा, "प्यारी तारा तुम पहले मेरी सहेली थीं, अब मेरी सौत हो गई हो।"

तारा ने उछलकर कहा, "चल दूर ! अरी कमबख्त तुझ ही पर गाली पड़ रही है।"

मैंने संजीदगी से कहा, "तारा तुम्हारी शादी मेरे शौहर के साथ हो गई है और मेरी ख्वाहिश के मुताबिक़ हुई है। मगर साहब को इसका इल्म नहीं है कि मुझको यह राज़ मालूम है और न मुझको यह मालूम था कि वह तुम्हारे साथ शादी कर रहे हैं।"

तारा मबहूत (स्तंभित) होकर बैठ गई और उसने अजीब वहशत के साथ निगार को घूरा। निगार ने संजीदगी के साथ तमाम क़िस्सा शुरू से आखिर तक मन-व-अन (ज्यों-का त्यों) बता दिया और तारा सकते के आलम में मुब्तिला हो गई। उसके बाद उसने हर तरह यक़ीन करने के बाद मुझको अजीब नज़रों से देखा और मुझसे लिपट कर एक हल्की-सी चीख के साथ कहा, "मेरी······रज़्ज़ो।"

उस वक़्त मेरा दिल भी भर आया और मैंने कहा, "मेरी तारा।"

हम दोनों देर तक लिपटे रहे और निगार हम दोनों से अलहदा बैठी रोती रही। आखिर मुलाज़िमा ने आकर नाश्ता लाने की इजाज़त माँगी तो हम दोनों एक-दूसरे से अलहदा हुए हैं। मैंने नाश्ता लाने का इशारा कर दिया और उसके बाद तारा ने मेरा हाथ पकड़ कर कहा :

"रज़्ज़ो तुमने अपनी मुहब्बत से मुझको अपने में जज़्ब कर लिया हम दोनों की कोशिश ने एक-दूसरे को तो इस क़दर मुत्तसिल कर

दिया मगर अल्लाह री मर्द की चालाक बात ।"

मैंने कहा, "तारा, वह बिल्कुल चालाक नहीं हैं। तुम उनको बहुत भोला पाओगी।"

निगार ने जलकर कहा, "अच्छा बस। हो चुकी अब उनकी तरफ़दारी।"

तारा ने कहा, "हाँ बहन, तुम्हारी यह तरफ़दारी समझ में न आई।"

मैंने कहा, "अब तुम को सब क़िस्सा मालूम हो ही गया है अब फ़िलहाल तो यह करो कि इस क़िस्से को साहब से छिपाओ। फिर एक निहायत दिलचस्प प्लॉट है, जिस पर हम दोनों अमल करके इस चालाकी का इन्तिक़ाम लेंगे।"

हम लोग यही गुफ़्तगू करते हुए नाश्ते पर बैठ गये और नाश्ते के वाद ही मोटर पर हम तीनों तारा के घर आ गये वहाँ से मैं थोड़ी देर के वाद रुख़सत होकर घर आ गई।

११

मैंने घर पहुँचकर देखा कि साहव इस वक़्त लापता हैं। लिहाज़ा जल्दी-जल्दी कपड़े तब्दील करके अपने रोज़-मर्रा के मामूली मशा-ग़िल में मसरूफ़ हो गई। ताकि साहव आकर कोई तसव्वुर न पायें, दरअसल मैं आज साहव की बेहद मुंतज़िर थी कि देखूं तो सही कि वह किस रंग में हैं। मुझको इस इन्तिज़ार में ज्यादा वक़्त न गुज़रा था कि आप इस अन्दाज़ से तशरीफ़ लाये कि गोया वाक़ई सफ़र पर से आ

रहे हैं। आते ही हैंडबेग एक तरफ़ रखकर बोले, "गुडमॉर्निंग रज्जो।"

मैंने कहा, "तसलीम। मिज़ाज शरीफ़।"

कहने लगे, "जब तक निहायत फ़र्स्ट क्लास चाय न पिलाओगी, मिज़ाज शरीफ नहीं हो सकते रज़ील ही रहेंगे।"

मैंने फ़ौरन चाय का इन्तिज़ाम करने की हिदायत कर दी और साहब ग़ुस्लखाने में तशरीफ़ ले गये। मैं उस वक्त दिल-ही-दिल में हँस रही थी कि यह किस क़दर बन रहे हैं और किस क़दर बना रहे हैं। मगर चूंकि उनसे इन्तिक़ाम लेने की निहायत ज़बरदस्त स्कीम मेरे ज़हनमें मौजूद थी कि आज यह मुझको इस तरह बना रहे हैं, कल खुद इन्हीं को बनाया जायेगा।

ग़ुस्लखाने से निकल कर साहब चाय पीने में मसरूफ़ हो गये और मजबूरन मुझको भी चाय पर नज़रे-सानी करनी पड़ी। इधर-उधर की बातों के बाद कहने लगे।

"कहिये अपनी सहेली निगार बेगम से कब से नहीं मिली हैं?"

मैंने कहा, "क्यों खैरियत तो है। आज निगार की याद ने क्यों सताया? मैं आज तीसरा दिन है जब मिली थी।"

कहने लगे, "कुछ नहीं यों ही पूछा था। उसके शौहर साहब क़िब्ला से मुलाक़ात हो गई थी।"

अब मैं समझी कि यह नौशाबा को क्यों पूछा जा रहा है। उस रोज़ अक़्द के वक़्त उनका सामना हो जाना आपके लिए मुसीबत का सामना था और इसी खलिश ने आज निगार के मुतालिक़ यह इस्तफ़सार कराया था कि अगर निगार से मुलाक़ात हुई होगी तो शायद उन्होंने कुछ कहा हो और उसका आप सुराग़ लगायें, मगर जब मैंने निगार से मिलने का ज़िक्र ही न किया तो आप भी बात को टाल गये और चाय पीकर कहने लगे:

"सफ़र की खस्तगी है रात को फिर सफ़र दरपेश है। लिहाज़ा थोड़ी देर सो रहना चाहिए।"

मैंने कहा, "फिर सफ़र दरपेश है, यह क्या ?"

कहने लगे, "हाँ आज दो रोज़ के लिए ज़रा अलीगढ़ जाना है। निहायत ज़रूरी काम है।"

मैं दिल-ही दिल में मुस्कराकर चुप हो रही और साहब सोने के लिए मसहरी पर चले गए। जब साहब सो गए तो मैंने सोचा कि जो प्लॉट मेरे ज़हन में है आख़िर उसको आज ही से क्यों न शुरू कर दूं। कुछ देर उसके नशबो-फ़राज़ पर ग़ौर किया। फिर निगार को महज़ इस मज़मून का एक ख़त लिख दिया कि:

"प्यारी निगार,

अब हमको अपना प्लॉट शुरू करने में आख़िर देर करने की क्या ज़रूरत है ? साहब इस वक़्त तक मुझसे छुपा रहे हैं। मेरी राय में तुम दूल्हा भाई के हमराह चली आओ। मुश्किल तो ज़रूर है लेकिन अगर तारा भी आसके तो क्या कहना है ! वह तुम्हारे साथ पर्दे में रहेगी। साहब को ख़बर भी न होगी।

तुम्हारी,
रज़िया"

उस ख़त को भेजकर मैं वक़्त गुज़ारी के लिए कुछ काम करने लगी। मगर निगार ने मेरे ख़त की फौरन ही तामील की और एक घण्टे के अंदर-अंदर उसका मोटर आ पहुँचा। मैंने कमरे का दरवाज़ा बन्द करके निगार को उतारा, उसके साथ ही तारा को भी। मैंने निगार से पूछा:

"दूल्हा भाई को लाई हो ना ?"

निगार ने कहा, "हाँ, उनको ख़ूब अच्छी तरह समझा-बुझाकर लाई हूँ और तारा को भी पूरी स्कीम बता दी है। यह भी इस स्कीम से मुत्तफ़िक़ हैं कि बज़ाहिर दोनों निहायत क़िस्म कि सौत न बन कर रहें और उन मियाँ जी को तिगनी का नाच नचाया जाये।"

मैंने कहा, "फिर दूल्हा भाई को घर ही में बुलाओ। इसलिए

कि वही तो इस प्लाट का इफ्तेताह करेंगे।"

निगार ने कहा, "हाँ हाँ बुलालो। वह तो तुम खुदा से चाहती हो कि मेरे मियाँ से बेतकल्लुफी बढ़ाकर उनको हाथ-से-बेहाथ कर दो।"

मैंने एक हल्का-सा तमाँचा निगार के रुख्सार पर मारकर तारा को चमटाते हुए अपने कमरे का रुख किया और उसी कमरे में जो मैंने तारा के लिए दुरुस्त किया था। उन दोनों को बिठाकर साहब को उठा दिया कि "दूल्हा भाई आये हैं।"

साहब गड़बड़ा कर उठ बैठे और घबराकर बोले, "कौन दूल्हा भाई?......निगार के साहब?...... तो उनको बाहर बिठाइये, मैं जाता हूं उनके पास।"

मैंने कहा, "नहीं वह तो घर ही के गोल कमरे में बैठ हैं। निगार भी तो आई है ना।"

साहब उस वक्त उस मुजरिम की तरह गड़बड़ाये हुए थे, जो पुलिस की पूरी गिरिफ़्त में आ जाने के बाद भागने की कोशिश करे और भागने की तरकीब समझ में न आये। कुछ खिसियाने-से हो रहे थे और मुझको उनकी इस कैफ़ियत से बड़ा लुत्फ़ आ रहा था। जब मैंने उनको फिर खामोश देखा तो बतौर तकाजा कहा:

"उठिये अब वह तन्हा बैठे हुए हैं। वहाँ जाइये तो मैं चाय भेजूं।"

साहब ने 'क़हरे-दरवेश बरजाने-दरवेश'* की कैफियत पैदा करते हुए कहा, "बहुत अच्छा जाता हूँ।" यह कहकर साहब उठे और गोल कमरे में पहुँच कर बड़ी जोर से 'सलाम अलेकुम' का दोनों तरफ़ से नारा बुलन्द हुआ। उधर मैं निगार और तारा के पास पहुँच गई। निगार ने दरवाजे की आड़ से साहब को मुखातिब करते हुए कहा, "भाई साहब, मैं भी तस्लीम अर्ज़ करती हूँ।"

साहब हमेशा निगार से मजाक़ किया करते थे, मगर इस वक्त

---

*ऋषि के प्रकोप का स्वयं उसी को फल भोगना पड़ता है।

सहज तस्लीम कह कर रह गये।

निगार के साहब ने निगार से कहा, "बेगम साहबा ज़रा हमारी बहन साहबा को हमारी भी तस्लीम कह दीजिये।"

मैंने कहा, "भाई साहब, मैंने पहले ही तस्लीम अर्ज़ की थी, शायद आप सुन न सके।"

निगार के साहब ने कहा, "मुझको आज आपकी और भाई साहब की मौजूदगी में एक बात कहना है ताकि आप दोनों के दरम्यान अर्से तक गलतफ़हमी न रहे। मगर शर्त यह है कि आप पढ़ी-लिखी, समझ-दार औरत की स्पिरिट जाहिर करें। दूसरे यह तो खुद आपकी ख्वा-हिश थी, जिसकी तक्मील हुई है। यानी आपके साहब ने कल अक़्द कर लिया।"

मैंने बन कर कहा, "अच्छा खैर आपकी बला से। आपको हमेशा ऐसे ही मज़ाक सूझते हैं।"

साहब सर झुकाये खामोश बैठे थे। निगार के साहब ने कहा, "नहीं मैं मज़ाक में नहीं, बल्कि संजीदगी के साथ कह रहा हूँ। अब आपका फ़र्ज़ यह है कि जाहिल औरतों की तरह सौत के एहसास से ख्वाहमख्वाह न जलें; और इनकी क़ाबिलयत यह है कि यह अपनी दो बीवियों के दरम्यान इत्तेहाद क़ायम करने में मआविन (सहायक) हों।"

मैंने अन्दर ही तारा को लिपटाकर प्यार करते हुए कहा, "मैं कैसे इस बात को सही समझूँ जबकि मैं खुद सर खपा चुकी हूँ और कामयाब न हो सकी। और अगर यह सच है तो इस सूरतसे इसको वह शादी नहीं कहा जा सकता जो मैं चाहती थी, बल्कि यह तो खुद उन्हीं की मर्जी की शादी हुई। रह गई वह बेचारी उससे कोई बुग़्ज़ क्यों रखूंगी, उसका क़ुसूर।"

निगार के साहब ने कहा, "अब आपका फ़र्ज़ यह है कि आप अपनी सौत को खुद बुलाकर यहाँ रखें और उनको अपनी बहन की तरह समझें।"

मैंने कहा, "भाई साहब, आपको मालूम है कि आज नहीं, बल्कि आज से बहुत पहले मैंने खुद यही चाहा था, मगर आपके भाई साहब ने मेरी इस ख्वाहिश को मेरी चालाकी समझा और मेरा एतबार न किया तो अब मैं किस उम्मीद पर यह ईमार अपने में पैदा करूँ ? और अगर पैदा भी करूँ तो इसका क्या भरोसा कि उसको सही समझा जायेगा ?"

स हब ने उस वक़्त गर्दन जो उठाई तो उनकी आँखों में मोटे-मोटे आँसू भरे हुए थे। यह वह क़यामतखेज़ मंज़र था कि मैं एकदम धक से होकर रह गई। अगर मुझको निगार न पकड़ ले तो यक़ीन जानिये कि दीवानावार दौड़कर उनके आँसू पोंछना शुरू कर देती। ताहम मैंने गुफ़्तगू का रुख बदलकर कहा :

"मुझको इस बात का यक़ीन है कि इन्होंने महज़ मेरी वजह से इस बात को छुपाया और इनको इस बात का खयाल होगा कि मैं औरत हूँ और औरत की फ़ितरत (स्वभाव) इसको बर्दाश्त नहीं कर सकती ख्वाह वह कैसी ही मज़बूत हो। बहरहाल मैं सब कुछ अंगेज करने को अब भी आमादा हूँ बशर्ते कि यह अब भी मुझपर ऐतमाद करें।"

निगार के साहब ने कहा, "आप का शुक्रिया······।"

फिर साहब की तरफ़ रुख करके बोले, "और अब आप बतायें कि क्या हुक्म है ?"

साहब ने कहा, "मैं तमाम इख्तियारात अपने, अपनी नई बीवी के इन्हीं को देता हूँ। जो चाहें अब से लेकर क़यामत तक करें। अगर मैं एक हर्फ़ भी ज़ुबान से निकालूँ तो गुनहगार।"

साहब के इन अल्फ़ाज़ का मेरे दिल पर गहरा असर हुआ। दिल तो चाहता था कि तारा का हाथ पकड़कर साहब के पास पहुँच जाऊँ मगर मस्लेहतन चुप हो रही और सिर्फ़ यह कह दिया।

"मगर मेरे ये तमाम एख्तियारात बहिस्सा-मसावी (समान रूप

से) तक़्सीम होंगे। मुझपर और मेरी शरीक पर मेरे एख्तियारात इसको हासिल होंगे।"

१२

निगार के 'वह' और मेरी सौत के साहब दोनों इस नागवार बहस को इस नतीजे पर ख़त्म करके बाहर चले गये कि अब साहब के दूसरे महल यानी तारा को भी उसी मकान में आ जाना चाहिये और हम दोनों मिल जुलकर बहनों की तरह रहें। उन दोनों के बाहर जाने के बाद तारा को खुदा जाने किस जज़्बे ने मुतास्सिर किया कि वह पहले तो मुझसे लिपट गई और उसके बाद बदतमीज़ की यह हरकत मुलाहिज़ा हो कि मेरे क़दमों पर गिरकर रोने लगी। उसकी इस हरकत पर निगार तो मुँह खोलकर रह गई और मैंने पहले तो जल्दी से उसको उठाया और उसके बाद उसको अपनी गोद में लिटाकर उसके हवास दुरुस्त किये। उसपर उस वक़्त कुछ ,,ज़ज़लाज़ी कैफ़ियत तारी थी—हाथ-पैर सर्द थे, होंठ काँप रहे थे और जिस्म पसीना-पसीना था। मैंने उसको हर तरह समझा-बुझा कर जब आदमी बनाया तो खुद उसी ने सिसकियाँ लेते हुए कहा :

"रज़्जो, क्या तुम मुझको अपनी सौत समझोगी ?"

मैंने उसकी पेशानी पर बोसा देते हुए कहा, "ऐसी प्यारी सौत को तो सौत भी नहीं कहा जा सकता। मेरी तारा तो मेरी बहन है, मेरे साहब की नहीं बल्कि मेरी भी मालिक।"

तारा ने दुपट्टे से मुँह छिपाकर एक हिचकी लेते हुए कहा,

"क़िस्मत ने हम दोनों प्यारी सहेलियों को एक-दूसरे से रक़ाबत (शत्रुता) के रिश्ते में मुन्सलिक (नत्थी) कर दिया।"

निगार ने आगे बढ़कर कहा, "साहब क़ाब्लियत भी क्या चीज होती, आप इन्तहाई रंजो-ग़म के मातहत सिसकियाँ और हिचकियाँ फर्मा रही हैं, अल्लाहो अकबर! मगर तक़रीर में वह जादू है कि गोया ताजमहल में जवाहिर से मीनाकारी फ़र्मा रही हैं। अल्लाहो अकबर! 'रक़ाबत के रिश्ते में मुन्सलिक कर दिया।' क्या कौसर से धुली हुई जुबान है।"

तारा को रोते-रोते जो हँसी आई तो उसी रोने के सिलसिले में खुच-खुच-खुच और खिल-खिल-खिल करने लगी। जब निगार ने उस को इतना हँसा लिया तो हाथ पकड़ कर उठाते हुए कहा:

"बदतमीज़ कहीं की! लो और सुनो बोदा को बेचारी बेहूदा शौहर वाली और बड़ी सौत वाली बनी है। क़दमों पर गिर रही थीं जो उस वक़्त रज्जो चाँटे रसीद करती तो?"

तारा ने कहा, "तो क्या, पहले वह सिर्फ़ सहेली थीं, अब बड़ी बहन भी हैं।"

मैंने कहा, "ना बाबा मैं बहन-भाई नहीं हूँ। बस सबसे अच्छा, सबसे प्यारा और सबसे उम्दा रिश्ता सहेली का है। तुमको नहीं मालूम कि मैं इस रिश्ते पर किस क़दर नाज़ करती हूँ। तारा अगर तुझे यह मालूम भी हो जाये कि मैं तुझे कितना चाहती हूँ तो तुझको एहसास हो कि दुनिया में ऐसी मुहब्बत भी हो सकती है।"

निगार ने कहा, "बहन ये फ़िज़ूल बातें आखिर क्यों हो रही हैं? क्या तुम दोनों बिल्कुल एक-दूसरे से अजनबी हो, जो आज यह रस्मी गुफ़्तगू की जा रही है। अरे हम तीनों एक-दूसरे से कभी जुदा हो ही नहीं सकते।"

शरीर तारा ने अपने चेहरे पर शगुफ़्तगी पैदा करते हुए कहा, "निगार बहन, एक सूरत क्या यह नहीं हो सकती कि तुम भी इसी

तरह इन्हीं साहब की क़लम में आजाओ, जिनकी हम दोनों रियाया हैं। तुम अकेले ज़रा बुरी मालूम होती हो ?"

निगार यह सुनते ही झपटी तारा की तरफ़, और तारा मेरी पीठ के पीछे छुप गई। मैंने कहा, "क्या हर्ज है ? आखिर इस पर बुरा क्यों मानती हो ?"

निगार ने कहा, "मैं कहे देती हूँ कि अपनी चहीती तारा को सँभालो और खुद भी होश के नाखुन लो। नहीं तो दोनों कानों के बीच सर कर दूंगी। वेहूदा कहीं की वदतमीज़।"

तारा ने कहा, "वहन, बुरा मानती हो तो जाने दो, वर्ना मैंने तो मुहब्बत के मारे कहा था कि यकजाई रहती। एक-से दो भले होते हैं तो दो-से तीन और भी भले होते हैं।"

निगार ने चूनरी उठाकर कहा, "नहीं मानेगी तू ?"

तारा ने कहा, "यह आपने कब कहा था ? लीजिये मान गये हम।"

उन दोनों की जंग ख़त्म होने के बाद निगार को मुतवज्जे करके मैंने कहा, "मज़ाक़ तो खत्म करो, अब यह बताओ करना क्या है ?"

निगार ने कहा, "हाँ तारा तुम भी ज़रा दिमाग़ से काम लेकर कोई तरकीब निकालो ?"

तारा ने कहा, "तरकीब तो बहुत आसान है और आज ही से यह ड्रामा शुरू हो सकता है। होगा यह कि आज हज़रत मुझसे यहाँ आने के मुताल्लिक़ कहेंगे ज़रूर, तो मैं साफ़ इन्कार कर दूंगी कि मुझसे दुनिया की हर मुसीबत झेली जा सकती है, मगर सौत की मुसीबत न झेली जायेगी और मैं हरगिज़ एक साथ न रहूँगी।"

निगार ने कहा. "है तो ठीक।"

मैंने कहा, "ठीक तो है, मगर होना यह चाहिये कि तुम लोगों के जाने के बाद मैं साहब पर ज़ोर डालूँ कि वह अभी अपनी दुल्हन को ले आयें। वह यक़ीनन मेरी इस ख्वाहिश की तक्मील के लिए बेक़रार होंगे और तारा के पास जायेंगे। उस वक़्त तारा उनसे यह कहे। मगर

एक बात का खतरा है कि कहीं वह तारा के लिए कोई बुरी राय न क़ायम कर लें।"

तारा ने कहा, "तो मैं ज़िद के तौर पर नहीं बल्कि खुशामद के तौर पर कहूँगी। और यह चीज़ तो मेरे लिए भी गोया नई होगी कि साहब की एक बीबी मौजूद है। लिहाज़ा इस सिलसिले में नहीं तो वह दबेंगे।"

निगार ने कहा, "नहीं जी, यही तरकीब ठीक है कि पहले तो रज़्ज़ो उनसे इसरार करें कि वह दुल्हन को ले आयें और इधर दुल्हन बेगम इन्कार कर दें। अब पड़ेंगे मियाँ शशोपंज में। फिर दुल्हन के न आने पर रज़्ज़ो को चाहिये कि वह म्हाज़े-जंग (युद्ध-मोर्चा) क़ायम कर दें।"

मैंने कहा, "मगर बहन एक बात है कि यह मज़ाक का ज़माना निहायत ग़ैर-दिलचस्प और सख्त परेशानकुन (दुःखद) गुज़रेगा।"

निगार ने कहा, "जी नहीं तुम दोनों को अपनी-अपनी जगह खूब लुत्फ़ आयेगा। वह हज़रत अलबत्ता यह सोचेंगे कि करें तो क्या करें?"

तारा ने कहा, "मगर शर्त यह है कि ऐक्टिंग कामयाब हो।"

मैंने कहा, "बिल्कुल कामयाब।"

निगार ने कहा, "मगर यह तो बताओ कि इस ज़माने के लतीफ़ों का इल्म हम सबको क्योंकर हुआ करेगा?"

मैंने कहा, "इसका इल्म इस तरह हुआ करेगा कि हम तीनों रोज़, वर्ना एक दिन बीच करके ऐसा प्रोग्राम बनायें कि मिलते रहा करें।"

तारा ने कहा "एक दिन बीच नहीं बल्कि रोज़।"

मैंने कहा, "रोज़ सही। निगार का मकान जंक्शन करार दिया जाये।"

तारा ने कहा, "मगर इस तरह यह होगा कि कुछ दिनों हम दोनों अलहदा रहेंगे, अगर यह क़िस्सा पैदा न होता तो दोनों आज ही मिल जाते।"

मैंने कहा, "सब्र का फल मीठा होता है।"

निगार ने कहा, "अच्छा अब मौलवी इस्माइल की रीडर शुरू कर दी गई।"

तारा ने कहा :

"रब का शुक्र अदा कर भाई,
जिसने हमारी गाय बनाई।"

हम लोग इस क़िस्म की दिलचस्प गुफ़्तगू शाम तक करते रहे। उसके बाद तारा और निगार मोटर पर उधर सिधारीं, इधर साहब से दिलचस्प इन्तक़ाम लेने का प्रोग्राम मैंने शुरू कर दिया।

१३

साहब के कमरे में जब मैं पहुँची तो आप एक आरामकुर्सी पर आँखें बन्द किये गुम-सुम पड़े थे, मेरी आहट पाकर भी न उठे। मैं इस कैफ़ियत की वजह को चूँकि जानती थी, लिहाज़ा मैंने आरामकुर्सी के बाज़ू पर बैठ कर उनके रेशमी, सुनहरी बालों से अपनी उँगलियाँ उलझा दीं और चन्द मिनट निहायत खामोशी के साथ सहलाती रही। साहब को इस तरह सर सहलाने से हमेशा लुत्फ़ आता है और वह कहते हैं कि मुझको नींद-सी आने लगती है मगर आज उसका उल्टा ही असर हुआ— वह अपनी मस्नूई (कृत्रिम) नींद से बेदार हो गये। आँखे खोल कर मेरी तरफ़ इन्फ़आल (लज्जा) में डूबी हुई नज़रों से देखा और अपने दोनों हाथों से मेरे हाथ को दबा कर ग़ालिबन निहायत कोशिश के साथ इतना कहा, "रज़्जो।" मैं समझी कि शायद इसके बाद और कुछ कहेंगे, मगर साहब चुप हो गये और जब देर तक वह कुछ न बोले

तो मैंने कहा, "आप मुझसे क्या कह रहे थे ?" साहब ने रुक-रुक कर सिर्फ़ इतना कहा, "अब मैं सिवाय इसके और कह ही क्या सकता हूँ कि मैं तुम्हारा गुनहगार हूँ ।"

मैंने उनके हाथों को अपनी तरफ़ खींचते हुए कहा, "यह आप क्या कह रहे हैं ? आप मेरे मजाज़ी खुदा हैं । खुदा वन्दो का गुनहगार कभी नहीं होता और फिर जब आप हक़ीक़ी खुदा के गुनहगार नहीं तो मुझ मजाज़ी बन्दी के गुनहगार क्योंकर हो सकते हैं ?"

साहब ने मेरा हाथ अपनी बन्द आँखों पर रखते हुए कहा, "मेरी रज्जो, मैंने तुम्हारी लाइल्मी मे दूसरी शादी करके गोया तुम्हारे मुक़द्दस (पवित्र) ऐतमाद को मजरूह किया । अब मैं हरगिज़ इस क़ाबिल नहीं हूँ कि तुम मेरे साथ फ़ैयाज़ाना सुलूक (उदारता व्यवहार) करो । काश ! तुम खफ़ा हो गई होती और मैं तुमको इन्तहाई इज्ज़ इन्कसार (विनम्रता) के साथ मना कर अपने दिल का बोझ हल्का कर लेता, मगर तुम्हारा यह निसाइयत (स्त्रीत्व) से बालातर सुलूक मेरे लिए सिवाय इसके कोई गुंजाइश नहीं रखता कि मैं खुद अपनी ही निगाहों से गिर जाऊँ । तुम यक़ीनन औरत नहीं हो, बल्कि देवी हो और तुम्हारी क़दर नहीं बल्कि परस्तिश करना मेरा फ़र्ज़ था । मगर मैंने क़ुदरत के इस अतिये (देन) को निहायत कोराना (अंधे की भाँति) तरीके पर ठुकराया । अब मैं किस मुँह से कहूँ कि तुम मुझको दरगुज़र कर सकती हो ।"

मैंने साहब की इस तक़रीर के बाद निगार, तारा और अपने मुत्तफ़िक़ा तौर पर (सर्वसम्मति से) मुरत्तब किये हुए प्रोग्राम को खतरा महसूस किया और वह वक़्त क़रीब था कि साहब के इन दर्दो-असर में डूबे हुए अल्फ़ाज़ से मुतास्सिर होकर चीखकर उनके क़दमों पर गिर पड़ूँ । मगर इस इम्तिहान के मौक़े पर मैंने अपने जज़्बात को क़ाबू में रखा । अलबत्ता साहब से मुखातिब होकर इस तकलीफ़-देह मुबहस को टालने के लिए मसनूई हँसी हँसते हुए कहा :

भी धोखा दिया है और यह बात उनको भी नहीं मालूम कि मेरी एक बीवी मौजूद है। लिहाजा उनको इस क़दर जल्दी न बुलाओ, बल्कि मुझको इनके लिए मुनासिब फ़िज़ायें पैदा करने का मौक़ा दो।"

मैंने कहा, "बस इतनी-सी बात है। बेहतर है तो मैं ख़ुद उनके पास जाती हूँ और उनको तमाम हालात बताकर लिए आती हूँ। फिर मेरा ज़िम्मा है।"

साहब ने कहा, "नहीं नहीं, ऐसा न करो, बल्कि इसके लिए मुनासिब मौक़ा आने दो। मैं आज ही से इसकी दाग़-बेल डाल दूँगा और अन्दाज़ा करूँगा कि वह हज़रत इस क़िस्म की यकजाई का किस हद तक ख़ैरमक़दम कर सकती हैं।"

मैंने कहा, "आख़िर इसमें क्या हर्ज है कि आप यह क़िस्सा मुझ पर छोड़ दें।"

साहब ने कहा, "लाहौल वला-क़ूवत! यह बात नहीं है बल्कि दरअसल मैं नहीं चाहता कि इस सिलसिले में तुम्हारी कोई दिल-शिकनी यानी मज़ीद दिल-शिकनी हो।"

साहब के इस अन्दाज़ से मैं मुतज़लज़ल हो गई होती, मगर ख़याल था कि तारा आज ही इस प्रोग्राम की मुंतज़िर होगी, लिहाजा मैंने कहा :

"अच्छा तो सिर्फ़ यह कीजिए कि उनसे यह कह दीजिए कि मैं तुमको अपने असली घर ले चलना चाहता हूँ। इसमें उनको यक़ीनन कोई उज्र न होगा। मगर आज ही उनको आजाना चाहिए। क्या आप मेरी इतनी-सी ज़िद भी पूरी नहीं कर सकते?"

साहब अब लाजवाब हो गए थे। और जब उनको जवाब देने की कोई सूरत नज़र न आई तो कहने लगे, "बेहतर है, मैं जाता हूँ और इमकानी कोशिश करता हूँ।"

मैंने कहा, "अब इमकानी कोशिश का क्या सवाल है। आप बस

समझ गई थी कि इनवेचा रे ने तारा को लाने में कोई कसर उठा न रखी होगी, मगर उसने प्रोग्राम के मुताबिक आने से इन्कार किया होगा और इसी वजह से ये वेचारे इस क़दर मुज़महिल और अफ़सुर्दा हैं और मुझसे महजूब हैं। बहरहाल इस सिलसिले में जब मैंने खुद कोई गुफ़्तगू न की तो आपने भी इसीमें आफ़ियत देखी कि उस बात को टाल जायें। चुनांचे कपड़े उतार कर शबख़्वाबी पहनने लगे तो मुझसे न रहा गया और मैंने कहा :

"यह क्या हो रहा है ?"

साहब ने शबख़्वाबी का कोट हाथ में उठाते हुए कहा।

"अब लेटूंगा।"

मैंने कहा, "बहुत मुनासिब, तो फिर मैं जाती हूं उस ग़रीब के पास।"

साहब ने कहा, "किसके पास ?"

मैंने कहा, "वही जिसको आप इसलिए ब्याहकर लाये हैं कि वह तन्हा रातभर एक घर में रहे और फिर आप महज़ मेरी खुशनूदी हासिल करने केलिए उसके साथ यह ज़्यादती करें कि दो दिन की ब्याही हुई, और आप उसको तन्हा छोड़कर चले आएं।"

साहब ने गर्दन झुकाकर कहा, "तो अब आपही बताइये कि मैं क्या करूं और क्या न करूं ?"

यह 'क्या करूं और क्या न करूं' गोया हमारे प्रोग्राम की पहली कामयाबी और साहब का पहला एतराफ़े-शिकस्त था। अपनी कामयाबी पर तो मैं दिल-ही-दिल में वेहद खुश थी, मगर साहब की इस उलझन में भी उलझ रही थी। आखिर मैंने अपने को मजबूत बना कर कहा, "इसी वजह से मैंने आपसे कहा था कि आप उनको यहीं ले आइये।"

साहब ने और भी अफ़सुर्दगी के साथ कहा, "रज़्ज़ो, तुम अपने मेयार पर दुनिया की हर औरत को क्यों देखना चाहती हो ?"

मैंने कहा, "यह क्या बात हुई?"

साहब ने कहा, "बात यह हुई कि तुम तो इस सूरत से उसको भुला रही हो, और वह है कि किसी तरह भुलाता ही नहीं भुलती। बल्कि जिस वक़्त से उसको यह मालूम हुआ कि वह मेरी दूसरी बीवी हैं, कुछ अजीब रंग है। मालूम यह होता है कि उन पर बेकसी तारी हो कर रह गई है।"

मैंने बात काटकर जल्दी से कहा, "खुदा न करे, ऐसी बातें मुँह से न निकालिये। बेकसी तारी हो उसके दुश्मनों पर। अब तो अगर मुझको अपना सुहाग प्यारा है तो उसके लिए भी दिल से यही दुआ निकलेगी कि खुदा उसके सुहाग को बरक़रार रखे और हम दोनों पर-वाना-वार आपके सामने इस दुनिया से रुख़सत हों।"

साहब ने कहा, "जिस वक़्त से मैं गया हूँ हर तरह की खुशामद कर रहा हूँ, समझा रहा हूँ और दलायल (तर्क) से भी उन्हें क़ायल करने की कोशिश कर रहा हूँ, मगर वह है कि किसी तरह मानती ही नहीं।"

मैंने कुछ ग़ौर करने के बाद कहा, "अच्छा अब मैं आपको एक तरकीब बताती हूँ बशर्ते कि आप उसको पूरा कर दें।"

साहब ने कहा, "खुदा के लिए इस बिचारी की परेशानी को किसी तरह दूर करो, मेरी रूह पर तकलीफ़ है। अगर यही हाल रहा तो क्योंकर बन पड़ेगी।"

यह गोया हमारे प्रोग्राम की दूसरी शानदार कामयाबी थी। मैंने साहब के चेहरे पर उन अल्फ़ाज़ की तासीर (असर) और तकलीफ़ अपनी आँखों से देख ली जो वह ज़ुबान से अदा कर रहे थे। मगर इस सिलसिले में कुछ कहने के बजाय मैंने सिलसिला-ए-गुफ़्तगू जारी रखते हुए कहा, "वह तरकीब यह है कि यह ज़ाहिर है कि मैं आपको इस वक़्त रहने और सोने न दूँगी, बल्कि आपको उन्हीं के पास जाना पड़ेगा। बेहतर यह होता कि आप मुझको भी ले चलते। मैं

खुद उनको समझाती और वह मेरी तबीयत का अन्दाजा करके खुद मेरे साथ कल यहाँ चलीं आतीं।"

साहब यह सुनकर एक आलमे-महवियत (तल्लीनता) में कुछ देर के लिए खो गए। उसके बाद यकायक चौंककर बोले, "मुझको इसमें कोई उज्र नहीं, इसलिए कि मैं तुम्हारे ईसार को समझता हूँ और मुझको मालूम है कि तुम हर खुशगवारो-नागवार (सुखद या दुःखद) सूरत को निबाह ले जाओगी। हालाँकि अगर तुम्हारी जगह कोई और औरत होती यानी खुद यह मेरी दूसरी बीवी भी इस ख्वाहिश का इज़्हार करती तो मैं उसको हरगिज़ मंज़ूर न करता।"

मैंने खुश होकर कहा, "फिर चलूँ मैं?"

साहब ने कहा, "क्या अभी इसी वक़्त?"

मैंने कहा, "और नहीं तो क्या पारसाल?"

साहब ने कहा, "यह भला कौनसा वक़्त है, कल दिन में चलना।"

मैंने कहा, "बेहतर है, मगर आप तशरीफ़ लेजाइये। मुझको खुश कर चुके, अब किसी और का भी हक़ है।"

साहब ने कहा, "मगर मैं उनसे कहकर और उनकी खुशी से आया हूँ। वह मेरा इन्तिजार न करेंगी।"

मैंने इसरार से कहा, "जी नहीं, उनकी खुशी और आपकी खुशी कैसी, यह तो हो ही नहीं सकता कि वह दो दिन की दुल्हन वहाँ अकेली पड़ी रहे और आप यहाँ मेरी दिल-बस्तगी फ़र्मायें। मेरी दिल-बस्तगी इसी में है कि आप उस बेचारी को तन्हा न छोड़ें और उनकी खुशी से न सही मेरी खुशी से आप वहीं आराम फ़र्मायें। उनकी खुशी से आप यहाँ आ गए थे अब मेरी खुशी से वहाँ चले जाइये।"

साहब ने कहा, "अच्छी आप दोनों की खुशी कि मैं उसकी तक्मील के लिए ज़मीन का गज़ बन जाऊँ। अब दोनों कल सुबह चलेंगे।"

मैंने कहा, "जी नहीं, बातें न बनाइये और चुपके से यहाँ से तशरीफ़ ले जाइये।"

साहब ने कहा, "भाई मैं सख्त थका हुआ हूँ और अब मेरा एक क़दम भी न उठेगा, ख्वाह आप कुछ भी करें।"

मैंने कहा, "बेहतर है तो मैं ताँगा बुलवाये देती हूँ। बहरसूरत आपका कोई उज्र मस्मूअ (श्रवण) न होगा, आपका इस वक़्त जाना बरहक़ है।"

साहब ने कहा, "सुनिये तो सही......।"

मैंने कहा, "बस अब कुछ कहने-सुनने की गुंजाइश नहीं। कपड़े पहनिए और आदाब अर्ज़।"

यह कहकर मैंने मुलाज़िम को ताँगा लाने की हिदायत कर दी और खुद साहब की टोपी पर ब्रुश करने लगी। वह हैरत से मेरा मुँह देख रहे थे और मैं उनको यहाँ से भेजने के तमाम इन्तिज़ाम कर रही थी: आख़िर बमुश्किल तमाम उनको कपड़े पहनाये और जाने के लिए तैयार कर दिया तो आपने कहा:

"अब मुझे भेज रही हो तो तुम भी चलो, सुबह का झगड़ा क्यों रहे।"

मैं तो ख़ुदा से यही चाहती थी। चुनांचे फ़ौरन तैयार हो गई। और तैयार क्या होना था कोई मेहमान तो जा नहीं रही थी अपने ही घर जा रही थी। लिहाज़ा मैंने मोज़े पहन कर जूता पहना और बुर्क़ा उठा लिया। इतने में ताँगा भी आ गया और हम दोनों रवाना हो गये।

तमाम रास्ता खामोशी के साथ तै करने के बाद जिस वक़्त ताँगा तारा के मकान पर रुका तो साहब ने मुझसे कहा:

"देखो रज़्ज़ो, अगर यहाँ कोई बात तुम्हारी मर्ज़ी के खिलाफ़ हो जाये तो तुम मुझको माफ़ करना और ख़ुदा के लिए उन मुसम्मात (देवीजी) को अपने बुलन्द मेयार पर देखने की कोशिश न करना।"

मैंने कहा, "अच्छा अब चलिये घर के अन्दर, सबक़ पढ़ा चुके।"

साहब ने मुझको ताँगे पर छोड़ा और ख़ुद घर में चले गये। मैं

ताँगे पर बैठी हूँ और साहब घर के अन्दर। न वह अब आते हैं न तब। आख़िर मैंने ख़ुद ही हिम्मत की और ताँगे से उतर कर घर में दाख़िल होगई। वहाँ देखती क्या हूँ कि साहब तारा को कुछ समझा रहे हैं और वह है कि निहायत लाजवाब ऐक्टिंग कर रही है। मुझको देखकर तारा का ग़ालिबन इरादा यह हुआ कि बेसाख्तगी में दौड़कर मुझको चिपट जाये, मगर मैंने उसको आँख दिखाई। लिहाज़ा वह बदस्तूर बैठी रही। साहब अलबत्ता मुझको देखकर उसके पास से हट गये और तारा को और मुझको बयक वक़्त मुख़ातिब करके कहा, "आप दोनों वही हैं जिनका एक दूसरे से ग़ायबाना तार्रुफ़ हो चुका है।"

यह कहकर आप तो ग़ालिबन ताँगे वाले को रुख़सत करने के लिए बाहर चले गये, इधर तारा की मुहब्बत ने जोश मारा तो झपटी मेरी तरफ़ 'मेरी रज्जो' कहकर। मैंने वहीं से डाँटा, "ख़बरदार! इस वक़्त मुहब्बत की ज़रूरत नहीं वर्ना सब खेल ख़राब हो जायेगा। तुम सौत बनी रहो।"

बेचारी अपने बेताबाना जज़्बे को ज़ब्त करके रह गई और मैं बदस्तूर उससे थोड़े फ़ासले पर खड़ी रही। इतने में साहब भी बाहर से आ गये और आते ही मेरे शाने पर हाथ रखकर बोले, "यानी आप अभी तक खड़ी हैं! गोया मेहमान आई हैं।"

मैंने कहा, "मैं जिनके घर आई, वह जब तक बैठने को न कहें कैसे बैठ जाऊँ?"

तारा ने चमक कर कहा, "मेरा घर तो यह बाद में हुआ, पहले तो आप ही का है। और आप ही को हर तरह का हक़ हासिल है।"

मैंने कहा, "पहले और बाद की कोई बात नहीं। अब तो हक़ दोनों का बराबर है।"

तारा ने कहा, "जी नहीं, आप फिर भी ज्यादा हक़दार हैं। मैं किस शुमार में हूँ।"

की हैं। अब इन हरीफ़ाना बातों को छोड़कर हम दोनों को यकजहती (एकता) के साथ मल-जोल से रहना है।"

तारा ने कहा, "मैंने आखिर कौन-सी नासमझी की बात कही? यह ठीक है कि मैं आपकी ऐसी आली दिमाग़ी कहाँ से लाऊँ, मगर मेरी समझ में तो नहीं आता कि मैंने कौन-सी हरीफ़ाना बात कही है।"

साहब इस वक़्त इन्तिहाई कर्ब (दुःख) के साथ घबरा-घबराकर टहल रहे थे। कभी-कभी बीच में बोलने का इरादा करते थे—मुँह खुलता, होंठ थरथराते थे; मगर सोचकर फिर चुप हो जाते थे। दरअसल इस वक़्त जो जली-कटी हम दोनों सौतों के दरम्यान हो रही थी, उससे साहब का यह हाल था कि गोया :

दुराहे पर मुझे मारा फ़रेबे-हक़्क़ो-बातिल ने

दोनों तरफ़ की ज़िद में वही आ रहे थे मगर लुत्फ़ इसी में था। काश! इस मंज़र को निगार भी देखती तो हम दोनों से ज़्यादा लुत्फ़ आता। मैंने साहब की इस कैफ़ियत को देखा, उधर तारा ने भी इस मन्ज़र की सैर की। फिर हम दोनों की जो आँखें चार हुईं तो तारा को हँसी आ गई, मगर मैंने फिर उसको आँखों-ही-आँखों में डाँटा और वह अपनी ऐक्टिंग को ख़राब करने से क़ब्ल ही संभल गई। आखिर मैंने इस तल्ख़ गुफ़्तगू का सिलसिला जारी रखते हुए कहा :

"बहन बुरा न मानो, मैं तुमसे लड़ने के लिए नहीं आई हूँ, बल्कि मैं तो इसलिए आई थी कि तुमको मनाकर घर ले चलूँगी ताकि हम दोनों मिल-जुल कर मुहब्बत के साथ रहें।"

तारा ने कहा, "आपकी सुलहजोई और नेकनफ़्सी (सद्वृत्ति) की परस्तिश करना चाहिये। लेकिन मैं क्या करूँ कि कमबख़्त लड़ाकी हूँ। गोया आप इस क़दर नेकनफ़्सी के साथ तशरीफ़ लाई थीं और मैंने लड़ाई लड़ना शुरू कर दी।"

मैंने कहा, "अच्छा बहन मेरी ही ग़लती सही, अब जाने दो।"

तारा ने कहा, "नहीं साहब, आपकी ग़लती क्यों, ग़लती तो मेरी

मैंने कहा, "वहन, यह तुम्हारा ख़याल है और ये बातें नासमझी है।"

अब साहब से न रहा गया। उन्होंने अपना टहलना ख़त्म करते हुए कहा, "अच्छा साहब, अब अगर इस तल्ख़ गुफ़्तगू का सिलसिला ख़त्म नहीं होता तो मैं जाता हूँ और इनको भी लिए जाता हूँ।"

मैंने कहा, "आपसे आख़िर क्या बहस, जो आप बीच में बोले ? हम दोनों में ऐसी बातों के बाद मबहस पैदा हो सकती है और होगी मगर आप कौन ?"

तारा ने कहा, "आपके नज़दीक भी मेरी ही ज़्यादती है तो बेहतर है आप अपने जाने से क़ब्ल मुझको मेरे घर पहुँचाते जाइये।"

मैंने कहा, "ना बहन, ऐसी बात नहीं कहते, बुरी बात है। तुम्हारा घर अब सिवाय इस घर के, और कौन हो सकता है ?"

साहब ने मुझसे कहा, "उठिये आप, और चलिए यहाँ से। आपने ज़िद करके यहाँ आकर और मुझको लाकर ये सब बातें सुनवाई हैं।"

मैंने कहा, "मैं पूछती हूँ कि आपसे आख़िर क्या मतलब ? आप क्यों नहीं अपने कमरे में जाकर लेटते-बैठते ?"

साहब ने कहा, "मैं एक मिनट भी न ठहरूँगा। अगर आपको चलना हो तो चलिए, वर्ना मैं जाता हूँ।"

मैंने कहा, "मैं अपनी इस छोटी बहन को हमराह लिये बग़ैर न जाऊँगी।"

साहब ने एक जज़्बे के साथ टोपी उठाई और झनझनाते हुए यह कहकर बाहर निकल गये, "तो बेहतर है आप इनको लेकर आइयेगा। मैं जाता हूँ।"

पहले तो मैं साहब को रोकती रही, मगर जब वह न रुके और चले ही गये तो मुलाज़िमा को उनके पीछे दौड़ाया कि जाकर देखे किधर जाते हैं ? और उसने थोड़ी दूर तक उनका ताक़्क़ुब (पीछा) किया। उसके बाद आकर जवाब दिया कि "सरकार, ताँगे पर कोठी (मेरे मकान) की तरफ़ गये हैं।"

उस तरफ़ से इत्मिनान करने के बाद तारा ने अपनी ऐक्टिंग खत्म की और मैं भी इस तसन्नो (कृत्रिमता) से दुनिया-ए-हक़ीक़त (यथार्थ संसार) में आ गई और हम दोनों एक-दूसरे से लिपट गये। हम दोनों में रात गये तक बातें होती रहीं और यह तै पाया कि सुबह ही निगार को यहाँ बुलवाया जाये और उसके आने के बाद साहब आयें; ताकि वह भी इस तमाशे को देख लें।

१५

सुबह होते ही सबसे पहला काम यह हुआ कि मैंने तारा को झिंझोड़कर कच्ची नींद से उठा लिया कि फ़ौरन किसी को खत लेकर भेजो कि निगार यहीं इस वक़्त चाय पिये। तारा ने फ़ौरन मेरी और अपनी तरफ़ से निगार को खत लिखा कि फ़ौरन आजाओ, तुम्हारा तसनीफ़ किया हुआ (रचित) ड्रामा अपने शबाब पर है और—

हैफ़ बर जाने सुखन गर बसुखनदाँ न रसद
(हाय वह बात जो किसी मर्मज्ञ तक न पहुँचे)

इधर मैंने और तारा ने मिलकर चाय का एहतमाम जरा तकल्लुफ़ के साथ कर दिया। इसलिए कि निगार तक तो ग़नीमत था, मगर खयाल यह पैदा हुआ कि कहीं ड्रामे की दिलचस्पी उनके शौहरे-ना दार को न घसीट लाये। इसके अलावा साहब को चाय भिजवानी थ लिहाजा सबसे पहला काम तो यह हुआ कि मैंने तारा के मशविरे साहब को खत लिखा कि चाय भेजी जाती है। इसको

बराहे-करम मुझको आकर ले जाइये, इसलिए कि आपकी दूसरी महल साहबा तो अपने घर जाने की धमकी दे रही हैं। मैं आखिर कहाँ जाने को कहूँ ? तारा ने इस खत को बहुत पसंद किया और तालियाँ बजाकर बोली :

"खत को देखकर इस तरह आयेंगे, गोया बन्दूक में रखकर छोड़े गये थे। मगर बहन तुम उनको मुझसे बिल्कुल ही फ्रण्ट न कर देना। ऐसा न हो कि दिल पर गहरे नक़्श जम जायें।"

मैंने कहा, "कुछ पागल हुई है। वह बड़े साफ़ दिल और फ़रिश्ता-खसलत हैं। तेरी खुशनसीबी थी कि तुझको ऐसा शौहर मिला।"

हम लोग बातें कर ही रहे थे कि निगार की आमद की इत्तला हॉर्न ने दी और हम दोनों दरवाज़े पर एक इधर, एक उधर छुपकर खड़े हो गये ताकि वह जब उतर कर आये तो बिल्कुल स्कूल की तरह उसको डरा दें। मगर वह एक ही चालाक, ड्योढ़ी में आते ही दोनों को देख लिया। लिहाज़ा हम तीनों तिगड्डम के अंदाज़ से इस तरह गुत्थम-गुत्था हुए कि दुश्वार हो गया कि कौन से हाथ किस जिस्म से मुताल्लिक़ हैं और कौन-सा पैर किस कूल्हे में लगा हुआ है। थोड़ी देर के बाद निगार ने हम दोनों को ज़बरदस्ती मार-धाड़कर अलहदा कर दिया और एक-एक दुहत्तर दोनों को मारकर कहा :

"कमबख्तो ! तुम तो बिल्कुल आपे से गुज़र गई हो, यह क़िस्सा आखिर क्या है ? तुम दोनों यहाँ कैसे ? और वह तुम्हारे दूल्हा भाई मोटर में बैठे हैं।

तारा ने कहा, "मोटर पर ही रहने दो। यहाँ इस मकान में बाहर की नशिस्त (बैठक) ही नहीं है।"

मैंने कहा, "वह तो खुद जानते होंगे कि यह साहब का मकान नहीं, दूरी वाला कैम्प है। मगर उनको वहीं चाय भिजवा दूँ।"

तारा ने कहा, "पहले चाय भेज दो, फिर कोई और बात हो।"

मैंने कहा, "दोनों जगह एक-एक आदमी के हाथ फ़ौरन यह खत भी।"

तारा ने चटपट ये सब काम कर लिये, उसके बाद हम तीनों चाय लेकर निहायत राज़दारी के साथ अन्दर वाले कमरे में जाकर बैठ गये और हम दोनों ने निहायत ज़ौको-शौक़ के साथ निगार को तमाम-अफ़साना सुनाना शुरू कर दिया।"

मैंने कहा, "मैं कहती हूँ।"

तारा ने कहा, "नहीं, मैं कहती हूँ।"

मैंने कहा, "तू चुप, मैं कहती हूँ।"

तारा ने कहा, "सुनो तो सही मैं कहती हूँ।"

निगार ने दोनों के मुँह पर हाथ रख दिया और बोली :

"दिमाग़ खाने को बुलाया है या चाय पिलाने को? अजीब बद-तमीज़ों से वास्ता पड़ा है। पहले रज़्ज़ो तुम सुनाओ, फिर तारा तुम और आखिर में मेरा फ़ैसला होगा।"

मैंने शुरू से तमाम क़िस्सा सुनाया, जिस पर जा-बजा तारा और निगार के क़हक़हे बुलन्द होते रहे। आख़िर वहाँ से जहाँ से कि तारा के पास साहब आ गये थे तारा ने अफ़साना शुरू किया। यह भी बेहद दिलचस्प था। मैं ख़ुद लोट-लोट गई। फिर मैंने वहाँ से क़िस्सा सुनाया जहाँ से कि साहब के लौटकर आने के वाक़्यात शुरू होते थे और आख़िर तक तमाम क़िस्सा सुना दिया। क़हक़हों का एक तूफ़ान था और मेरे सीने में साँस मुश्किल से समाती थी। निगार ने अपने को सँभालकर कहा :

"मेरी दोनों डुगडुगियों ने इस एक बन्दर को नचाया ख़ूब।"

मैंने कहा, "बहन, तुम भी तो अपने भालू को ख़ूब नचाती हो।"

तारा ने कहा, 'रज़्ज़ो, तुम ही बताओ कि मेरी अदाकारी किस क़दर मुकम्मल है?"

निगार—"तू हमेशा की नक़्क़ाल है।"

मैंने कहा, "और मैं?"

निगार ने कहा, "मुख़्तसर यह कि मियाँजी ख़ूब उल्लू बनाये गये।"

ऊपर से आवाज़ आई, "यह खाकसार उल्लू आदाब अर्ज़ करता है।" यह कहकर रोशनदान से फांद पड़े। हम तीनों एक चीख के साथ खामोश हो गये। आखिर मैंने साहब से कहा।

"अरे निगार है निगार।"

साहब ने लापरवाही के साथ कहा, "निगार क्या उल्लू से भी छुप सकती है।" यह कहकर खुद निगार के साहब को घर में बुला लिया और हँस-हँस कर हमको उनके सामने करने के बाद कहने लगे :

"हज़रत, यह आपके तुफ़ैल में मुझको एक क़ल्बी अज़ीयत (हार्दिक यातना) से निजात मिली है। मैं तो खुदा जाने किस रौ में चला आ रहा था कि दरवाज़े पर आपको देखकर इरादा किया कि पुश्त के दरवाज़े से जाऊँ। इधर से जो गुज़रा, इन तीनों के क़हक़हों की आवाज़ आई, कान लगाकर आवाज़ जो सुनी तो इस शरारत और साज़िश का इल्म हो गया। मारे खुशी के मैंने यही मुनासिब समझा कि रोशन दान से इन तीनों पर फांद पड़ूं मगर इनमें से एक-आध मर जाता। बहरहाल अब कुछ कहने-सुनने की ज़रूरत नहीं। मैं इस सज़ा का मुस्तहक़ था जो मुझको मिली और अब अपनी ज़िन्दगी का खुशगवार दौर शुरू करना चाहता हूँ, मगर मय निगार बहन और उसके साहब बहादुर के, बशर्ते कि वह भी एक शादी कर लें।"

निगार ने जिलबिला कर कहा, "लो और सुनो। ज़रा होश के नाखुन लो। मुझको भी रज़्ज़ो या तारा समझा है?"

निगार के साहब ने कहा, "नहीं साहब मेरी सिंगल बीबी डबल है।

इस पर एक क़हक़हा पड़ा और मुसलसल क़हक़हों की फ़िज़ पैदा हो गई।

राही मंज़िल और रास्ता	आदिल रशीद
सिसकती मुस्कान	आदिल रशीद
दो तिल दो आँखें	कृष्णगोपाल आबिद
नीरजा	रवीन्द्रनाथ टैगोर
भोर का तारा	अनीता चट्टोपाध्याय
तीस लाख के हीरे	तीर्थराम फ़िरोज़पुरी
आग की प्यास	रांगेय राघव
हथौड़े और चोट	द्वारकाप्रसाद एम० ए०
साधना	कृष्णगोपाल 'आबिद'
हीर राँझा	एम० असलम
कटी पतंग	शरण
फूल और धारायें	प्रो० हरिश्चन्द्र
कागज़ की नाव	गोविंदवल्लभ पंत
प्रेम पुजारिन	पं० सुदर्शन
वीणा	यज्ञदत्त शर्मा
माथे की बिंदिया	अनीता चट्टोपाध्याय
अँधेरी गलियाँ	विनोद रस्तोगी
यह मंज़िल अनजानी	कृपाशंकर भारद्वाज
वह माँ थी ?	सुधीर 'क्षीरिज'
दरार और धुआँ	भगवतीप्रसाद वाजपेयी
काले साये	जमनादास 'अख्तर'
सूने मेले	कृपाशंकर भारद्वाज
काली गोरी	जमनादास 'अख्तर'
३ बजकर १५ मिनट	तीर्थराम फ़िरोज़पुरी
अँधियारी पूनम की रात	रत्नप्रकाश 'शील'
प्रीत किये दुःख होय	दयाशंकर मिश्र

तूफ़ान और तिनका	विनोद रस्तोगी
घूँघट के आँसू	यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र'
तड़पत बीते रैन	मधूलिका मिश्र
अमिता	राजाराम शास्त्री
धुन्ध	श्यामसुन्दर पर्वेज
आदमी का बच्चा	यशपाल

जीवनोपयोगी

जीवन और व्यवहार	स्वेट मार्डेन

परिवार नियोजन

बर्थ कन्ट्रोल	डा० केवल धीर

हिन्दी गीत

श्रेष्ठ कवयित्रियों की प्रतिनिधि रचनाएँ	स्नेही
हिन्दी के लोकप्रिय प्रणय गीत	भूपेन्द्र स्नेही व गिरिराज सक्सेना

हास्य-व्यंग्य

दिल फेंक	शौकत थानवी
लाटरी का टिकट	शौकत थानवी
शैतान की डायरी	शौकत थानवी
जी हाँ पिटे हैं	शौकत थानवी
श्रीमती जी	शौकत थानवी
शरारत	शौकत थानवी

उर्दू काव्य

२००१ शेर	नूरनबी अब्बासी
५०० रुबाइयाँ	नूरनबी अब्बासी
आज की नज़्में	नूर अब्बासी-नूर नक़वी
इश्क़िया ग़ज़लें	नूरनबी अब्बासी
इक़बाल की उर्दू शायरी	मुग़नी अमरोहवी